धान–गेहूँ फसल–चक्र में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन : वर्मीतकनीक

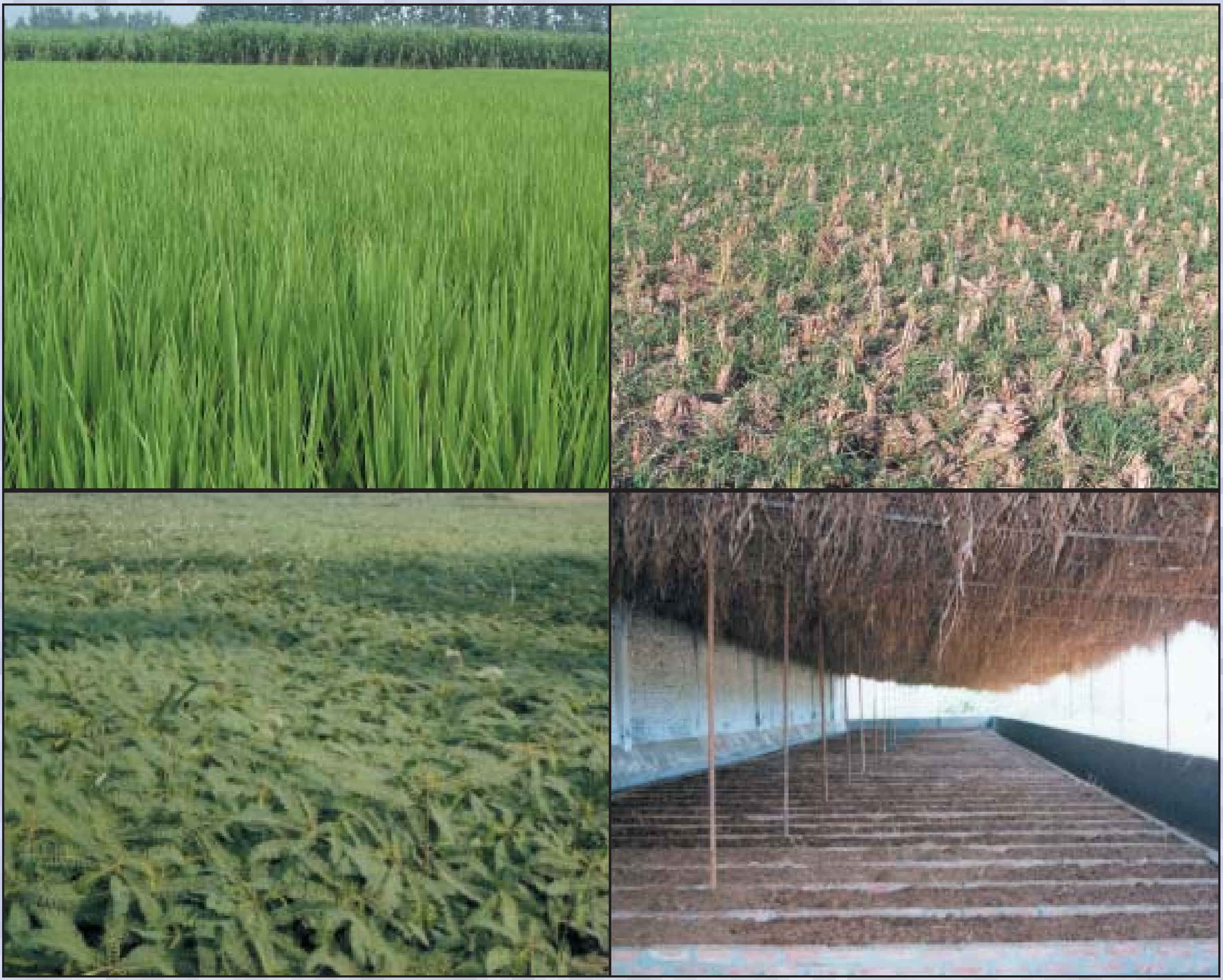

धर्मबीर यादव, आर. एस. श्योकन्द, आर. के. मलिक,
आर. सी. वर्मा, एस. एस. मान एवं दिलबाग सिंह

कृषि विज्ञान केन्द्र, देवीगढ़, कैथल
विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

उद्धरण

धर्मबीर यादव, आर. एस. श्योकन्द, आर. के. मलिक, आर. सी. वर्मा, एस. एस. मान एवं दिलबाग सिंह. 2005. धान–गेहूँ फसल–चक्र में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन : वर्मीतकनीक, चौ.चरण सिंह ह.कृ.वि., हिसार – 125 004

आवरण पृष्ठ

धान की फसल

जीरो टिलेज तकनीक द्वारा बीजी गई गेहूँ की फसल

ढ़ेंचा की हरी खाद

वर्मीकम्पोस्ट ईकाई

लेखक :

धर्मबीर यादव, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल।

आर. एस. श्योकन्द, संयोजक, कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल।

आर. के. मलिक, निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आर. सी. वर्मा, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (कृषि वानिकी), कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल।

एस. एस. मान, प्रशिक्षण सहायक, कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल।

दिलबाग सिंह, जिला विस्तार विशेषज्ञ (कीट विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, कुरुक्षेत्र।

इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना (NATP), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, ने अपनी विशेष अनुसंधान उपयोजना – "संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियों को तेजी से अपनाने व इसका सिंधु–गंगा के मैदानों में चावल–गेहूँ प्रणाली में प्रोन्नतिशीलता व फार्म स्तर तक प्रभाव (उत्पादन व अनुसंधान प्रणाली के माध्यम से)" के अंतर्गत आर्थिक सहायता प्रदान की है।

इस प्रकाशन में प्रस्तुत की गई सामग्री और लिए गए पदनाम किसी भी रूप में चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के विचारों की अभिव्यक्ति नहीं है तथा किसी भी देश, क्षेत्र, शहर और इलाके या उसके अधिकारियों या सीमाओं और सीमान्त प्रदेशों की सीमांकन की कानूनी स्थिति से संबंधित नहीं है। जहां कहीं भी ट्रेड नामों का इस्तेमाल किया गया है, उसे किसी की पुष्टि या किसी के प्रति भेदभाव नहीं समझा जाना चाहिए।

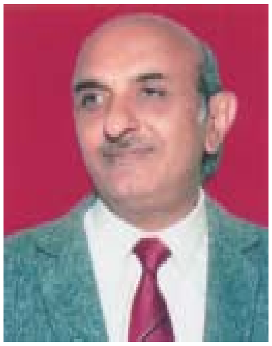

कुलपति
हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
हिसार (हरियाणा)

प्राक्कथन

हरित क्रांति के फलस्वरूप हम खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गए हैं। मगर धान–गेहूँ जैसे सघन फसल–चक्र अपनाने, रासायनिक उर्वरकों पर अति निर्भरता, जैविक व कार्बनिक खादों की उपेक्षा के परिणामस्वरूप भूमि की उर्वरा शक्ति व कार्बनिक अंश की मात्रा धीरे–धीरे कम होती जा रही है। धान–गेहूँ फसल–चक्र में बहुतायत में उपलब्ध फसल अवशेषों का सदुपयोग करके वर्मीतकनीक द्वारा कार्बनिक खाद तैयार की जा सकती है। अतः वर्मीतकनीक फार्म अवशेषों के सदुपयोग के अतिरिक्त समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन द्वारा धान–गेहूँ फसल–चक्र में टिकाऊपन प्राप्ति की दिशा में विशिष्ट भूमिका अदा कर सकती है।

मुझे आशा है कि “धान–गेहूँ फसल–चक्र में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन : वर्मीतकनीक” पुस्तक प्रान्त के किसानों व प्रसार कार्यकर्ताओं तक विषय संबन्धित नवीनतम जानकारी उपलब्ध करवाने तथा भूसंसाधन संरक्षण व टिकाऊ कृषि में योगदान करने में सार्थक साबित होगी।

(एम.के. मिगलानी)
कुलपति

आमुख

हरित क्रांति के सूत्रधार हरियाणा–पंजाब में गत तीन दशकों के दौरान फसल उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। इसमें धान–गेहूँ फसल–चक्र का विशेष योगदान है। अन्न कमी से जूझ रहा देश अन्न विपुलता की स्थिति में पहूँच गया है। इसमें देश के कर्मठ किसानों, कृषि वैज्ञानिकों एवं नीति–निर्धारकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। मगर धान–गेहूँ फसल–चक्र में हमें विभिन्न समस्याओं का भी सामना करना पड़ रहा है – गिरता भूजल स्तर, भूमि की उर्वरा शक्ति का ह्रास, मृदा में घटता कार्बनिक अंश, खरपतवार प्रतिरोधिता व कृषि रसायनों का अंधाधुंध प्रयोग।

धान–गेहूँ फसल–चक्र को एक टिकाऊ व्यवस्था बनाए रखने के लिए हमें रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करते हुए कार्बनिक खादों को समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन में सम्मिलित करने की आवश्यकता है। धान–गेहूँ फसल–चक्र में फसल अवशेष बहुतायत में उपलब्ध हैं, मगर इन्हें व्यर्थ में जला दिया जाता है। उपलब्ध कृषि अवशेषों का सदुपयोग करके वर्मीतकनीक द्वारा कार्बनिक खाद तैयार करनी चाहिए ताकि अधिकाधिक क्षेत्र में इसका प्रयोग किया जा सके। वर्मीकम्पोस्ट व वर्मीवाश का समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन में समावेश करके धान–गेहूँ फसल–चक्र में टिकाऊपन प्राप्ति की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

वर्मीतकनीक के अंतर्गत केंचुआ–पालन, वर्मीकम्पोस्ट व वर्मीवाश उत्पादन में विभिन्न संस्थान, गैर–सरकारी संस्थाएं व किसान लगे हुए हैं। मगर सभी की तकनीक में थोड़ा बहुत अन्तर है। ऐसे में वैज्ञानिक कसौटी पर खरी विभिन्न विधियों का विवरण इस पुस्तक में दिया गया है ताकि किसानों का सही मार्गदर्शन हो सके। इसके अतिरिक्त अन्य कार्बनिक खादों की चर्चा के अलावा वर्मीतकनीक आधारित समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन पर प्रकाश डाला गया है। पुस्तक में संबन्धित विषयों पर विस्तार से चर्चा की गई है। आशा है कि यह पुस्तक अन्नदाता तक अपना संदेश पहुंचाने में सफल होगी।

मार्गदर्शन एवं सहयोग हेतु हम डॉ. के.पी. सिंह, विभागाध्यक्ष (सस्य विज्ञान); डॉ. ओ.पी. रूपेला, इकरीसेट, हैदराबाद; डॉ. आर.एस. ढुकिया, वरिष्ठ विस्तार शिक्षा विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान); प्रगतिशील किसान श्री नवनीत, गुलाब सिंह, जिले सिंह, राम कुमार व महाबीर शर्मा का धन्यवाद ज्ञापित करते हैं जिनसे हमें इस पुस्तक को तकनीकी तौर पर सुदृढ़ करने में मदद मिली।

लेखक

विषयानुक्रम

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन का महत्व	1
2.	कार्बनिक खादों की महत्ता	2
3.	फार्म अवशेष उपलब्धता एवं सदुपयोग	4
4.	वर्मीतकनीक	8
5.	वर्मीकम्पोस्ट इकाई का प्रारूप एवम् आर्थिक विश्लेषण	19
6.	धान–गेहूँ में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन	21
7.	संदर्भ–सूची	24

समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन का महत्व

भारत में हरित क्रांति के परिणामस्वरूप खाद्यान्न सुरक्षा प्राप्त कर ली है। बढ़ती आबादी को भरपेट भोजन उपलब्ध कराने में यहां के कर्मठ किसानों, कृषि वैज्ञानिकों एवं नीति–निर्धारकों ने सराहनीय कार्य किया है तथा खाद्यान्न उत्पादन 20 करोड़ टन के रिकार्ड स्तर को भी पार कर गया है। मुख्यतया धान–गेहूँ फसल–चक्र ही हरित क्रांति का सूत्रधार है। देश में 10 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र धान–गेहूँ फसल–चक्र के अंतर्गत है। लेकिन अब यह आभास होने लगा है कि धान–गेहूँ फसल–चक्र द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया जा रहा है। अब उच्च उत्पादन हेतु पूर्व की अपेक्षा अधिक मात्रा में आदानों (inputs) की आवश्यकता पड़ती है। उत्पादकता वृद्धि दर धीमी हो रही है तथा पर्यावरण पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। अतः हमें नवीन तकनीकों की आवश्यकता है जो हरित क्रांति की उपलब्धियों को स्थायीत्व प्रदान कर सके (गुप्ता व अन्य, 2002)।

धान–गेहूँ जैसे सघन फसल–चक्र अपनाने, रासायनिक उर्वरकों पर अति निर्भरता, कार्बनिक खादों की सतत् उपेक्षा के परिणामस्वरूप भूमि की उर्वरा शक्ति व कार्बनिक अंश में कमी आ रही है तथा भौतिक संरचना व रासायनिक गुणों पर भी दुष्प्रभाव पड़ा है। दीर्घकालीन शोधों द्वारा सतत् धान–गेहूँ व्यवस्था के अन्तर्गत मृदा पोषक तत्वों में कमी, मुख्य व सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्धता में असमानता तथा कार्बनिक अंश में कमी होने के प्रमाण मिले हैं (चौधरी एवं पाल, 1994; लड्ढ़ा व अन्य, 2000)। धान–गेहूँ फसल–चक्र की उत्पादकता में कमी के अन्य कारण हैं – देर से बीजाई, मजदूर समस्या, अधिक जुताई, कर्षण शक्ति की कमी, कीट/व्याधि प्रकोप, खरपतवार प्रतिरोधिता, पानी की कमी आदि (हैरिंग्टन व अन्य, 1993; मलिक व अन्य, 1998; गुप्ता व अन्य, 2002)।

अतः हमें अपनी कृषि पद्यतियों में फेरबदल की नितांत आवश्यकता है। भूसंसाधन संरक्षण व धान–गेहूँ फसल–चक्र की उत्पादकता वृद्धि में स्थायीत्व हेतु समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन अपनाने की आवश्यकता है। इसके अंतर्गत रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करते हुए जैविक व कार्बनिक खादों के समुचित उपयोग की आवश्यकता है। इन विधियों में लीफ कलर चार्ट द्वारा नत्रजन उर्वरक का आवश्यकतानुसार प्रयोग, हरी खाद, जीवाणु खाद, कम्पोस्ट, गोबर की खाद, बायोगैस स्लरी, वर्मी कम्पोस्ट, वर्मीवाश आदि का समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन प्रणाली में प्रयोग करते हुए टिकाऊ कृषि की दिशा में कदम बढ़ाने चाहिएं।

चूंकि धान–गेहूँ फसल–चक्र के अन्तर्गत बहुतायत में फसल अवशेष उपलब्ध होते हैं जिन्हें अधिकांशतया जला दिया जाता है। इस प्रकार बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन का ह्रास होने के साथ पर्यावरण प्रदूषण भी हो रहा है। इन फसल अवशेषों का गोबर के साथ प्रयोग करके वर्मीतकनीक द्वारा तैयार वर्मीकम्पोस्ट व वर्मीवाश का समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन प्रणाली में समावेश करके फसल उत्पादकता में स्थायीत्व प्राप्त किया जा सकता है। अतः अन्य संसाधन संरक्षण तकनीकों के अलावा समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन का धान–गेहूँ व्यवस्था में स्थायीत्व हेतु विशेष महत्व है।

कार्बनिक खादों की महत्ता

समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन में कार्बनिक खादों की विशिष्ट भूमिका है। पोषक तत्वों की रासायनिक स्रोत से पूर्ति के अलावा विभिन्न अन्य स्रोत भी हैं जिनका समावेश हम अपनी कृषि प्रणाली में कर सकते हैं।

उपलब्ध कार्बनिक खादों में गोबर की खाद (FYM), बायोगैस स्लरी, कम्पोस्ट खाद, वर्मीकम्पोस्ट, हरी खाद, तिलहन की खलियों आदि का विशेष महत्त्व है। उचित विधि द्वारा खाद तैयार न करने का कारण है किसानों की इन खादों के प्रति उदासीनता। क्योंकि रासायनिक उर्वरक आसानी से उपलब्ध हैं, कम मात्रा में प्रयुक्त होते हैं तथा तुरन्त असर दिखाते हैं। अतः किसान धीरे–धीरे कार्बनिक खाद के प्रति उदासीन होते चले गये।

गोबर की खाद :–

गोबर की खाद आमतौर पर हर किसान द्वारा तैयार की जाती है। मगर कुछ वर्षों से किसान इसकी महत्ता को भूल गये हैं। किसान इस खाद को बनाने का वैज्ञानिक तरीका नहीं अपना रहे हैं। गड्ढ़े में खाद न बनाकर खुले में सड़क के किनारे या जोहड़ के किनारे गोबर का ढ़ेर लगाये जा रहे हैं (चित्र 1)। ऐसे में धूप या बारिश में पोषक तत्वों का ह्रास हो रहा है तथा खाद भी पूरी तरह तैयार नहीं होती जोकि खरपतवारों व दीमक को निमंत्रण देती है।

चित्र 1. सड़क के किनारे गोबर के ढ़ेर

बायोगैस स्लरी :–

बायोगैस स्लरी एक पूर्णतया गली–सड़ी खाद है जोकि खरपतवार बीजों से मुक्त भी है। बायोगैस संयंत्र द्वारा गोबर से अधिकतम मात्रा में खाद उपलब्ध होती है तथा अतिरिक्त गैस का घर में खाना बनाने, रोशनी करने तथा ट्यूबवैल ईंजन चलाने सहित ऊर्जा के किसी भी रूप में प्रयोग किया जा सकता है। मगर इस दिशा में भी किसानों की सक्रियता उस स्तर तक नजर नहीं आती जोकि होनी चाहिए। सरकारी तौर पर हर सम्भव मदद उपलब्ध है, अतः किसानों को इस दिशा में आगे आना चाहिए।

कम्पोस्ट :–

फसल अवशेषों या फार्म अवशेषों से विभिन्न विधियों द्वारा बनी खाद को कम्पोस्ट खाद कहते हैं। इसके लिए विभिन्न विधियाँ मौजूद हैं – नैडेप विधि, ढ़ेर विधि, बैंगलोर पद्धति, कोयम्बटूर पद्धति, इंदौर पद्धति आदि। कम्पोस्ट बनाने की इन विधियों में थोड़ी जटिलता है तथा किसान भी फार्म अवशेषों की महत्ता को अभी तक नहीं समझा है। इन विधियों का प्रयोग किसान के स्तर पर न के बराबर है। फार्म अवशेष में प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं जिनका सदुपयोग कम्पोस्ट बनाने में करना चाहिए।

तिलहन खलियाँ :–

भारत में लगभग 25 लाख टन खलियों का उत्पादन प्रति वर्ष होता है। इन तिलहन खलियों में नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश आदि के अलावा कार्बनिक पदार्थ भी होते हैं। मुख्य तिलहन खलियों में उपलब्ध औसत तत्वों की मात्रा तालिका 1 में दी गई है। इन्हें फसल की बीजाई के समय या खेत तैयार करने से पहले डालना चाहिए।

तालिका 1. विभिन्न तिलहनी खलियों में औसत तत्वों की मात्रा (%)

कार्बनिक खाद	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
बिनौले की खली	6.4	2.9	2.2
सरसों की खली	5.2	1.8	1.2
तिल की खली	6.2	2.0	1.2
मूँगफली की खली	7.3	1.5	1.3
नीम की खली	5.2	1.0	1.4
अरण्डी की खली	4.3	1.8	1.3

(स्रोत : दहामा, 2002)

हरी खाद :–

हरी खाद कार्बनिक उर्वरक का एक अति महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इसमें ढ़ैंचा, मूंग, सनई, लोबिया, ग्वार आदि मुख्य रूप से हरी खाद के रूप में प्रयोग किये जा सकते हैं (तालिका 2)। धान–गेहूं फसल–चक्र में विशेष तौर पर ढ़ैंचा एक अच्छी हरी खाद की फसल है जोकि लगभग 40–50 दिनों में खेत में दबाने लायक हो जाती है (चित्र 2)। इस प्रकार नत्रजन उपलब्ध होता है, भूमि का पी.एच. मान संतुलित होता है, पोषक तत्व उपरी सतह में आ जाते हैं, वायु का संचार बढ़ता है तथा भूमि की संरचना में सुधार होता है। ढ़ैंचा की हरी खाद का प्रयोग करके हम बौनी धान में नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश की मात्रा एक तिहाई कम कर सकते हैं व बासमती धान की काश्त बिना रासायनिक उर्वरकों के कर सकते हैं।

तालिका 2. विभिन्न हरी फसलों में उपलब्ध मुख्य तत्वों की मात्रा (%)

हरी खाद फसल (ताजा)	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
लोबिया	0.71	0.15	0.58
ढ़ैंचा	0.62	–	–
ग्वार	0.34	–	–
मोठ	0.80	–	–
मूँग	0.72	0.18	0.53
सनई	0.75	0.12	0.51
उड़द	0.85	0.18	0.53

(स्रोत : दहामा, 2002)

जैविक खाद :–

जैविक खाद में जीवित सूक्ष्म जीवाणु होते हैं जिनका प्रयोग करके हम फसलों में पोषक तत्वों की पूर्ति कुछ सीमा तक कर सकते हैं। राइजोबियम, एजोला, एजोटोबैक्टर, एजोस्पीरिलम जैसे नत्रजन स्थिरीकरण बैक्टीरिया हवा से नत्रजन लेकर फसलों को उपलब्ध करवाते हैं। पी.एस.बी. (फास्फेट घुलनशील बैक्टीरिया – श्यूडोमोनास बेसीलस), पी.एस.एफ. (फास्फेट घुलनशील फफूंद – एस्पर्जीलस पैनसीलियम) द्वारा जमीन में फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है। धान में नीली हरित शैवाल का प्रयोग पोषक तत्व उपलब्धता में अपनी भूमिका अदा करता है। विभिन्न दलहनी फसलों में राइजोबियम द्वारा स्थिरीकृत नत्रजन की मात्रा 20–80 किलोग्राम/एकड़ है (तालिका 3)।

तालिका 3. दलहनी फसलों द्वारा नत्रजन स्थिरीकरण की मात्रा

फसल	नत्रजन स्थिरीकरण मात्रा (किलोग्राम/एकड़)
मूंग/उड़द	20 – 22
ग्वार	15 – 78
चना	34 – 40
लोबिया	32 – 34
मूँगफली	20 – 24
बरसीम	40 – 60
मटर	21 – 23
अरहर	67 – 80
सोयाबीन	24 – 35

(स्रोत : पालनियप्पन एवं अन्नादुरई, 1999)

चित्र 2. ढैंचा की हरी खाद

फार्म अवशेष उपलब्धता एवं सदुपयोग

भारत में उपलब्ध कृषि अवशेषों के भिन्न–भिन्न आकलन हैं। वित्त मंत्रालय व एफ.ए.ओ. के आकलन के अनुसार 30 करोड़ टन वार्षिक अवशेष प्राप्त होते हैं (तालिका 4)। टंडन (1994) के अनुसार पशुधन से गीला गोबर व पेशाब के रूप में लगभग 200 करोड़ टन वार्षिक अवशेष प्राप्त होते हैं (तालिका 5)। हालांकि विभिन्न संस्थाओं व व्यक्तियों ने अलग–अलग आकलन किये हैं। मगर इतना तय है कि हजारों लाखों टन फार्म अवशेष भारतवर्ष में उपलब्ध हैं।

फसल अवशेष :–

फसलों के अवशेष में गेहूं का भूसा, धान की पुआल, धान का छिलका, कपास/अरहर की छंटियाँ, गन्ने की पत्तियाँ, प्रैस मड, बगास (खोई), मोलैसिस (शीरा), पेड़ों की पत्तियाँ, खरपतवार के पौधे, बाजरा/ज्वार/मक्की की कड़बी आदि ऐसे अवशेष हैं जो कि किसान की जरूरतों को पूरा करने के उपरान्त बच जाते हैं (चित्र 3)।

चित्र 3. फसल अवशेष धान की पुआल के ढ़ेर

आमतौर पर उत्तरी–पश्चिमी भारत के धान–गेहूं फसल चक्र वाले राज्य हरियाणा–पंजाब में फसल अवशेषों को खेत में जला दिया जाता है जिससे पर्यावरण प्रदूषण बढ़ रहा है तथा पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है। श्योराण (2003) द्वारा हरियाणा में किये सर्वेक्षण अनुसार 28% छोटे किसान, 88% मझोले किसान व 96% बड़े किसान धान की पराली को खेत में जला देते हैं। मनुष्यों में प्रदूषण संबन्धित बीमारियां बढ़ रहीं हैं तथा तापमान में वृद्धि हो रही है जिसके दूरगामी दुष्प्रभाव होंगे। इन अवशेषों का हम सदुपयोग कर सकते हैं।

अगर हम इन फसल अवशेषों से उपलब्ध तत्वों पर नजर डालें तो पाते हैं कि हम इन अवशेषों को भूमि में वापिस पंहुचाकर लाभान्वित हो सकते हैं। इनमें नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश के अलावा सभी मुख्य व सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्ध हैं तथा कार्बनिक पदार्थ भी भरपूर मात्रा में हैं (तालिका 4)।

तालिका 4. भारत में फार्म अवशेषों की क्षमता तथा पोषक तत्वों की मात्रा

फसल	अवशेष उत्पादन (लाख टन)	पोषक तत्व (%) नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
धान	1060	0.58	0.23	1.66
गेहूं	809	0.49	0.25	1.28
ज्वार	210	0.40	0.23	2.17
बाजरा	155	0.65	0.75	2.50
मक्की	125	0.59	0.31	1.31
दलहन	137	1.60	0.15	2.00
अरहर	66	1.10	0.58	1.28
चना	50	1.19	–	1.25
गन्ना	409	0.35	0.04	0.50
तिलहन	357	–	–	–

(स्रोत : वित्त मंत्रालय, 1990–91 एवं एफ.ए.ओ. फील्ड डाक्यूमैंट नं. 15 व 24)

पशु अवशेष :–

भारतवर्ष में उपलब्ध पशु–गोबर (चित्र 4) व पेशाब अवशेष की मात्रा का आकलन तालिका 5 में दिया गया है तथा उनसे मिलने वाले पोषक तत्वों की मात्रा का भी अनुमान लगाया गया है।

चित्र 4. गोबर के ढ़ेर

हम इन अवशेषों का कृषि में सदुपयोग करने हेतु विभिन्न विधियाँ अपना सकते हैं।

तालिका 5. भारत में गाय–भैंस के गोबर व पेशाब में पोषक तत्वों की मात्रा का आकलन

स्रोत	वार्षिक उत्पादन (लाख टन)	पोषक तत्व					
		नत्रजन		फास्फोरस		पोटाश	
		%	लाख टन	%	लाख टन	%	लाख टन
गीला गोबर	12278	0.15	18.42	0.10	12.27	0.05	6.14
पेशाब	8800	0.20	16.00	0.01	0.80	0.20	16.00
कुल	21078	–	34.42	–	13.07	–	22.14

(स्रोत : टंडन, 1994)

1. भूमि में दबाना :–

फसल कटाई उपरान्त खेत में आग न लगाकर इसे गहरी जुताई वाले हल से जमीन में दबा देना चाहिए तथा पानी देकर नत्रजन (यूरिया) खाद 25 किलो/एकड़ डाल दें। इस प्रकार ये अवशेष गल जाएंगे। साथ में ढ़ैंचा की बीजाई कर दें ताकि ढ़ैंचा में दिये गये पानी का उपयोग करके अवशेष गलते रहें व ढ़ैंचा की हरी खाद भी मिले। हालांकि गेहूं के अवशेष गलने में समय लेते हैं इसलिए किसान इनको दबाने की बजाय जलाना आसान समझते हैं। मगर हमें यह सोचना चाहिए कि यह कुदरती कार्बनिक खाद है जो हमारी फसलों के काम आ सकता है।

कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल द्वारा वर्ष 2001 में देसी तकनींकी ज्ञान पर किये गये सर्वे के दौरान एक कृषक (श्री रामचन्द्र, सींवन) द्वारा अपनायी जाने वाली विधि कारगर लगी तथा वैज्ञानिकों ने इसके परिणामों का आकलन भी किया। इस विधि का विवरण निम्न प्रकार है :–

गेहूं की कटाई (कम्बाइन) उपरान्त खेत में पानी देकर अच्छी तरह जुताई करें ताकि अवशेष मिट्टी में मिल जाएं। सप्ताह बाद दोबारा पानी लगाकर खेत में धान की तरह पाड़े काटें तथा सुहागा लगायें। इस प्रकार लगभग 5–7 दिन तक पानी खेत में खड़ा रखें। खेत में 25 किलो यूरिया प्रति एकड़ डालें ताकि कार्बन : नाईट्रोजन का अनुपात घट जाए और अवशेष का गलन शीघ्र हो जाए।

2. जीरो टिलेज पद्धति :–

अगर हम जीरो टिलेज पद्धति अपनाते हैं तो खेत में खड़े फसल अवशेष ज्यादा परेशानी उत्पन्न नहीं करते। हालांकि फसल अवशेषों की मात्रा को देखते हुए नत्रजन की अतिरिक्त मात्रा का प्रयोग शुरू में किया जा सकता है ताकि कार्बन : नाईट्रोजन अनुपात ठीक हो सके व अवशेषों का गलन हो सके। हालांकि बाद में नत्रजन की मात्रा कम की जा सकती है।

हाथ से कटी हुई धान के सभी प्रकार के अवशेषों के बीच में जीरो टिलेज ड्रिल द्वारा गेहूँ की बीजाई आसानी से सम्भव है (चित्र 5)।

चित्र 5. जीरो टिलेज तकनीक द्वारा गेहूं की बीजाई

धान के उपरान्त चूंकि खेत अच्छी तरह तैयार नहीं होते, अतः उत्तरी हरियाणा व पंजाब में किसान छिट्टा विधि से बीजाई करते हैं। जीरो टिलेज ड्रिल से बीजाई करके हम लाईन बीजाई का लाभ उठा सकते हैं तथा उर्वरकों व फसल अवशेषों का सदुपयोग कर सकते हैं। मंडूसी खरपतवार का जमाव कम होता है। अतः उपज में भी वृद्धि होती है। हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के प्रयासों से गेहूं में जीरो टिलेज ड्रिल का प्रयोग काफी बड़े क्षेत्र में किसान अपना चुके हैं (तालिका 6)। धान में भी इस प्रकार के प्रयोग जारी हैं। इस प्रकार हम जीरो टिलेज द्वारा जुतायी का खर्च घटाकर

पैट्रोलियम पदार्थों की बचत कर सकते हैं, फसल अवशेषों का सदुपयोग कर सकते हैं एवं भूमि व जल संसाधनों का संरक्षण कर सकते हैं।

तालिका 6. कैथल जिला में जीरो टिलेज तकनीक द्वारा गेहूं की खेती

वर्ष	जीरो टिलेज ड्रिल संख्या	क्षेत्रफल (एकड़)	कृ.वि.के. द्वारा तजुर्बे/ प्रदर्शन क्षेत्र (एकड़)	उपज (क्विं./एकड़) जीरो टिलेज	उपज (क्विं./एकड़) सामान्य पद्धति
1997–98	1	32	32	45.1	41.3
1998–99	5	315	65	47.8	44.9
1999–00	23	1400	–	–	–
2000–01	111	10000	50	47.3	45.7
2001–02	225	21000	25	42.0	40.7
2002–03	500	45000	50	47.0	44.4
2003–04	950	90000	30	44.7	42.4

(स्रोत : यादव, 2005, व्यक्तिगत सूचना)

3. कम्पोस्ट खाद :–

साधारण कम्पोस्ट विधियों का प्रयोग करके हम फसल अवशेषों का सदुपयोग कर सकते हैं। गड्ढ़ा विधि, इंदौर विधि, बैंगलौर विधि, नैडेप विधि, कोयम्बटूर विधि आदि का प्रयोग करके फसल अवशेषों से कम्पोस्ट खाद बना सकते हैं।

4. फफूंद द्वारा खाद :–

धान की पराली से खाद बनाने हेतु इकरीसेट, हैदराबाद के वैज्ञानिक डॉ. ओ.पी. रूपेला व हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों के साथ मिलकर कैथल जिला में वर्ष 2002–03 में प्रयास शुरू किये गये। इन प्रयासों में सफलता भी मिली मगर कुछ समस्याएं भी सामने आई जिन्हें दूर कर आगे कार्य जारी है। रूपेला (2002) द्वारा विकसित विधि निम्न प्रकार से है :–

पहले खाद बनाने का घोल तैयार करें। इसके लिए एक बड़े हौद में पानी डालें। इसमें 1 ग्राम/लीटर पानी की दर से यूरिया व 1 ग्राम/100 लीटर पानी के हिसाब से एस्पर्जीलस अवामोरी फफूंद का पाउडर डालें। यह फफूंद इकरीसेट, हैदराबाद व चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार के सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग में उपलब्ध हैं। पास में मिट्टी का एक चबूतरा (15'X 5'X1) बना लें तथा इस पर मोटी लकड़ियाँ बिछायें ताकि नीचे से हवा का आगमन रहे।

पराली को खाद बनाने वाले घोल में 2 मिनट डुबोकर लकड़ियों के चबूतरे पर परतें बिछायें। परतें बिछाते समय बीच–बीच में 6 किलोग्राम रॉक फास्फेट या 3 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट प्रति क्विंटल पराली की दर से बुरकें। इस प्रकार 5 फुट ऊँचा ढ़ेर लगायें। ऊपर से सूखी पराली की एक परत से ढक दें। ढेर में 70% नमी बनाकर रखें। पोलीथीन शीट से दिन में ढ़कने से नमी प्रबन्धन आसान हो जाता है। एक पाईप के आगे नोकदार लोहे की छड़ जोड़कर पाईप के अगले सिरे के पास छेद करके ढ़ेर के अन्दर पानी पंहुचाया जा सकता है। लगभग 30 दिन बाद ढेरी को पलट दें। लगभग 45–60 दिन में अच्छी खाद तैयार हो जाती है। अगर मुट्ठी में पराली लेकर मरोड़ कर तोड़ सकें तो समझें कि खाद तैयार है (चित्र 6)।

चित्र 6. फफूंद द्वारा धान की पराली से खाद बनाना

5. मल्चिंग :–

कुछ फसलों के अवशेषों को मल्चिंग के तौर पर खेत में बिछाया जा सकता है। इस प्रकार खरपतवार की समस्या कम होगी, नमी संरक्षण होगा और समय के साथ अवशेषों के गलने से फसल को खाद उपलब्ध होगी। उदाहरण – गन्ने में पत्तियों को जलाने की बजाय खेत में बिछाकर उपर्युक्त लाभ लिये जा सकते हैं।

6. गोबर की खाद (FYM) :–

गड्ढ़े बनाकर उनमें गोबर/पेशाब को डालें तो अच्छी प्रकार खाद तैयार होती है। गड्ढ़े में उचित तापमान बन जाने

की वजह से खाद अच्छी तरह गल–सड़ जाती है तथा खरपतवार के बीज नहीं बचते। धूप व बारिश के कारण तत्वों का नुकसान नहीं होता। अतः गड्ढ़े में ही गोबर की खाद तैयार करनी चाहिए।

7. बायोगैस स्लरी :–

बायोगैस संयंत्र लगाकर गोबर/पेशाब का समुचित उपयोग किया जा सकता है (चित्र 7)। बायोगैस स्लरी पूर्ण रूप से तैयार खाद होती है, तथा जलाने व रोशनी हेतु गैस मु“ त में मिलती है।

8. वर्मी कम्पोस्ट :–

फसल अवशेषों को गोबर के साथ मिलाकर वर्मी कम्पोस्ट खाद बनाने में प्रयोग किया जा सकता है। केंचुए द्वारा तैयार इस खाद में पोषक तत्व अच्छी मात्रा में उपलब्ध होते हैं तथा थोड़े समय में (45–60 दिन) खाद तैयार हो जाती है। इस विधि का विस्तृत विवरण अगले अध्याय में दिया गया है।

चित्र 7. बायोगैस संयंत्र।

वर्मीतकनीक

वातावरण संरक्षण एक सर्वमान्य राष्ट्रीय ध्येय है। बढ़ती आबादी के दबाव से उत्पन्न ऊर्जा संकट व पर्यावरण प्रदूषण के इस दौर में गैर–परम्परागत स्रोतों जैसे कार्बनिक अवशेष पदार्थों से ऊर्जा–प्राप्ति तकनीक की आवश्यकता महसूस की जा रही है। घरेलू, कृषि, शहरी व औद्योगिक स्रोतों से कार्बनिक प्रदूषण हो रहा है। अवशेषों का काफी बड़ा भाग (60% से अधिक) गलने–सड़ने योग्य होता है। वास्तव में कुछ भी व्यर्थ पदार्थ नहीं हैं, अधिकांश व्यर्थ पदार्थ/अवशेष 'गलत स्थान पर कार्बनिक पदार्थ' होते हैं। अवशेष पदार्थ व्यर्थ नहीं हैं, अवशेष अनमोल हैं। ऐसी अवधारणा ही हमारे भविष्य को सुनहरा बना सकती है।

वर्मीतकनीक का सिद्धान्त 20वीं सदी के मध्य में विकसित हुआ। पहला वर्मीकम्पोस्ट प्लांट हॉलैंड्स लैंडिंग, ऑन्टोरियो, कनाडा में स्थापित किया गया। तदोपरान्त अमरीका, इटली, जापान, फ्रांस, ईजरायल आदि में वर्मीतकनीक अपनाई गई। वर्मीतकनीक द्वारा बेकार फसल अवशेष, फार्म अवशेष, घरेलू अवशेष, शहरी कूड़ा–कर्कट आदि को मूल्यवान कम्पोस्ट में परिवर्तित किया जा सकता है। गोबर की उपलब्धता आवश्यकता से कम है। एक आकलन के अनुसार हरियाणा प्रांत में लगभग 60–70% गोबर जलाने के काम लाया जाता है। शेष गोबर से कुरड़ी/ढ़ेर में डालकर खाद बनाई जाती है। गलत विधि (गड्ढ़े की बजाये खुले ढ़ेर) से खाद बनाने की वजह से इसके तत्वों का ह्रास हो जाता है। इस प्रकार तैयार खाद का बहुत सीमित क्षेत्रफल में ही प्रयोग संभव है। अतः हम कार्बनिक खादों की कमी का आकलन कर सकते हैं।

इस कमी को हरी खाद, जैविक खाद के अलावा कम्पोस्ट बनाकर पूरा किया जा सकता है। हमारे पास काफी मात्रा में फसल अवशेष (धान की परालीं, गेहूं का बचा भूसा, बिछावन, पशुओं का छोड़ा चारा, खरपतवार आदि) हैं। काफी बड़े क्षेत्र में इन फसल अवशेषों को जलाया भी जाता है। इस प्रकार पर्यावरण भी प्रदूषित होता है व कार्बनिक पदार्थों की भी हानि होती है। गांव व शहर का अन्य कार्बनिक कचरा भी गंदगी फैलाता रहता है। इन सभी का कम्पोस्ट बनाकर सदुपयोग किया जा सकता है। केंचुओं द्वारा कम समय में अच्छी गुणवत्ता वाली वर्मीकम्पोस्ट खाद, वर्मीवाश आदि तैयार किये जा सकते हैं।

1. केंचुए : मौलिक तथ्य

प्रजातियाँ :–

भारत में केंचुओं की लगभग 509 प्रजातियां पाई जाती हैं। जमीन व कार्बनिक पदार्थ में घूमने फिरने की क्षमता के आधार पर इन्हें तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है –

1. कम गहराई तक घूमने वाले (30 से.मी. तक)।
2. मध्यम गहराई तक घूमने वाले (1–2 मीटर तक)।
3. अधिक गहराई तक घूमने वाले (10 मीटर तक)।

कम गहराई तक घूमने वाले केंचुए (एपिजेइक) वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए सर्वोत्तम हैं। इनमें ईसीनिया फीटिडा नामक यूरोपीय प्रजाति वर्मीकम्पोस्ट बनाने हेतु सर्वोत्तम पाई गई है (चित्र 8)। यह प्रजाति लुम्ब्रीसीडि परिवार (फाईलम एनिलिडा) की है। इनकी लम्बाई 4–6 सें.मी. है। हालांकि सर्दी के मौसम में आकार घट जाता है तथा बारिश के दिनों में बढ़ जाता है। इनका रंग लाल होता है, अतः इन्हें रेड–वर्म भी कहते हैं। इनका औसत भार 0.5–1.0 ग्राम होता है।

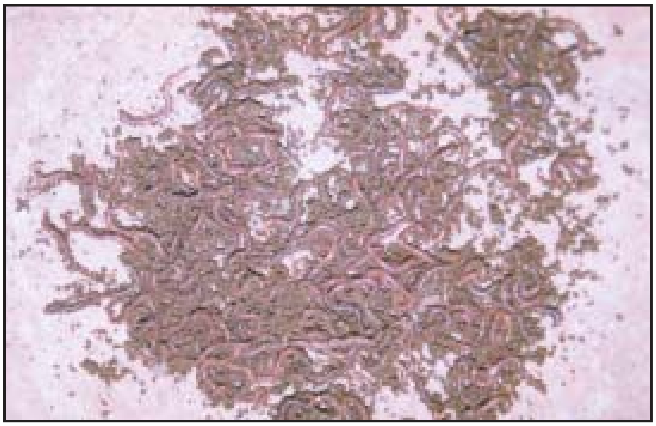

चित्र 8. केंचुए की प्रजाति ईसीनिया फीटिडा

इसके अलावा दक्षिणी भारत में मध्यम गहराई तक घूमने वाले (एनिजेइक) केंचुए की देसी प्रजाति युड्रिलस यूजिनी का प्रयोग भी किया जाता है। फेयरीटिमा प्रजाति भी वर्मीकम्पोस्ट बनाने हेतु प्रयोग की जाती है। किसान भाई आस–पास उपलब्ध देसी केंचुओं को पालने की कोशिश कर सकते हैं। जो अच्छी प्रकार वर्मीकम्पोस्ट बनाने में प्रयोग की जा सकें, उन प्रजातियों का विस्तार करें।

प्रजनन :–

केंचुए द्विलिंगी जीव हैं जिनमें नर व मादा दोनों अंग होते हैं। निषेचन दो अलग–अलग केंचुओं में होता है। इस प्रकार

हर केंचुआ अण्डे देने में सक्षम है। अण्डों का आकार ज्वार/धनिये के आकार (2–3 मि.मी.) का होता है (चित्र 9)। अनुकूल वातावरण में 2–3 सप्ताह में अण्डों से बच्चे बाहर आ जाते हैं। एक अण्डे से 1–2 बच्चे निकलते हैं। ईसीनिया फीटिडा के अण्डे से 6 बच्चे तक भी निकल सकते हैं। लगभग 6 माह में बच्चे वयस्क हो जाते हैं। यह समय वातावरण के तापमान पर निर्भर करता है। वयस्क केंचुओं की गर्दन पर एक छल्ले के आकार का उभरा हुआ क्षेत्र बन जाता है, जिसे क्लाइटेलम कहते हैं। यहाँ कुकून (अण्डे) बनाने वाले पदार्थों का स्राव करने वाली ग्रंथियां होती हैं। केंचुओं की प्रजनन क्षमता लगभग दो वर्ष तक रहती है। इसके बाद क्लाइटेलम गायब हो जाता है। उचित वातावरण में ईसीनिया फीटिडा की आयु लगभग 4 वर्ष तक हो सकती है। अण्डो का उत्पादन वर्ष भर चलता रहता है, मगर अक्तूबर–नवम्बर में सर्वाधिक उत्पादन होता है। ईसीनिया फीटिडा द्वारा औसतन 11 अंडे प्रति वर्ष दिये जाते हैं। अनुकूल परिस्थिति में लगभग 1.5–2 माह में कुंचओं की संख्या दोगुणी हो सकती है तथा वर्ष भर में लगभग 50 गुणा संख्या बढ़ सकती है। मगर वास्तविक खेत–परिस्थिति में उचित प्रबन्धन द्वारा लगभग 10 गुणा वृद्धि संभव है।

चित्र 9. केंचुए के अण्डे

पाचन–क्रिया :–

केंचुए शाकाहारी तथा माँसाहारी दोनों प्रकार के होते हैं। ये किसी भी मृत कार्बनिक पदार्थ को खा सकते हैं। हालांकि इनमें मिट्टी को भी भोजन के रूप में प्रयोग करने की क्षमता है। एपिजेइक केंचुए (ईसीनिया) अधिकांशतया कार्बनिक पदार्थ खाते हैं, जबकि एनिजेइक (युड्रिलस) केंचुए कार्बनिक पदार्थ व मिट्टी दोनों खाते हैं। केंचुओं के शरीर का 50–60% भाग प्रोटीन होता है जो आवश्यक अमीनो अम्लों से भरपूर होता है। कैंचुए अपने शरीर के पानी में 70% की कमी तक भूख–प्यास से लड़ने की सामर्थ्य रखते हैं। कुछ माँसाहारी केंचुए दूसरे केंचुओं को भी खा जाते हैं, उदाहरण – अफ्रीकी केंचुआ एगसट्रोडिलस। केंचुए दिनभर में अपने वजन के बराबर कार्बनिक पदार्थ/मिट्टी खा जाते हैं जिसमें से 100–300 मि.ग्राम प्रति ग्राम शरीर भार की दर से भोजन के रूप में शरीर में प्रयोग करते हैं तथा शेष पदार्थ को बीट के रूप में बाहर निकाल देते हैं।

केंचुए का शरीर विभिन्न खंडों में विभक्त होता है। 8–9वें खण्ड पर एक कुदरती चक्की होती है जिसे गिजर्ड कहते हैं। केंचुए द्वारा खाये गये पदार्थ का सबसे पहले तेजाबी म्यूकस (एमाइलेज युक्त) द्वारा पाचन किया जाता है। फिर गिजर्ड के माध्यम से गुजरकर खाना बारीक पीस दिया जाता है। कुछ केंचुओं में कैल्शियम स्राव करने वाली ग्रंथियां भी होती हैं जो पी.एच. सन्तुलन में सहयोग करती हैं। केंचुए की आँत में मौजूद एन्जाईम एमाईलेज, सेलुलेज, प्रोटिएज, लाइपेज, काइटेज और लाइकेज द्वारा भोजन का पूरी तरह अपघटन कर दिया जाता है। पूरी आँत में पी.एच. मान स्थिर (6.3–7.3) रहता है जिससे जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है। चिपचिपे पदार्थों के स्राव द्वारा उनकी बीटें कुछ ठोस हो जाती है। अतः इनकी संरचना में स्थिरता आती है। पाचन तंत्र से गुजरने के दौरान हार्मोन पदार्थ आक्सीन व जिब्रलीन भी मिल जाते हैं। लाभदायक जीवाणु व कुछ फफूंदनाशक पदार्थों का मिश्रण भी भोजन पदार्थ में हो जाता है। इस प्रकार सुदृढ़ पाचन व्यवस्था की बदौलत अवशेष पदार्थ गुणवत्तायुक्त वर्मीकम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाते हैं।

वातावरण प्रभाव :–

औसतन केंचुए दिनभर में 17 बार ऊपर–नीचे घूमते हैं। केंचुएं रात्रिचर होते हैं, अतः बोरियों आदि से ढ़ककर अंधेरा रखने से इनकी कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। इनकी कार्य कुशलता के लिए औसत तापमान 28–30^0 से0 उचित है, हालांकि ये 20–40^0 तक तापमान सहन कर सकते हैं। तापमान में उतार–चढ़ाव का केंचुओं की क्रियाशीलता, श्वसन, बढ़वार, संतानोत्पत्ति आदि पर प्रभाव पड़ता है। तापमान नियंत्रित करने की केंचुओं की अपनी क्षमता होती है। उनके द्वारा बनाई गई सुरंगों में वातानुकूलन द्वारा तापमान को कुछ हद तक नियंत्रित किया जा सकता है। सूर्य की अल्ट्रावायलट किरणें व अधिक गर्म/ठंडा तापमान केंचुओं के लिए घातक है। अतः शैड या पेड़ की छाया जरूरी है। इनकी अच्छी कार्यकुशलता के लिए हवा का संचार व नमी भी आवश्यक

है। कम्पोस्ट बैड में जल संग्रहण क्षमता की 75% नमी होनी चाहिए। केंचुओं के शरीर पर नमी की एक परत होनी अति आवश्यक है, वरना ये जीवित नहीं रह सकते। शरीर पर पानी की परत के माध्यम से ही केंचुए त्वचा द्वारा श्वसन क्रिया करते हैं। कम नमी वाले माध्यम में इनके शरीर की त्वचा कटने–फटने का भी डर रहता है तथा इनकी मृत्यु हो जाती है। अधिक नमी में हवा का संचार घटने से दम घुटकर मर सकते हैं या जान बचाकर भाग सकते हैं। केंचुए 4.5 से 8.7 पी.एच. मान तक कार्य करने की क्षमता रखते हैं, हालांकि 7.0 पी.एच. पर सबसे अधिक क्रियाशील रहते हैं। कार्बनिक पदार्थ में कार्बन व नत्रजन अनुपात 40:1 से कम होना उचित रहता है। यह अनुपात अधिक बढ़ने पर केंचुए मोटे व शिथिल हो सकते हैं तथा कम्पोस्ट उत्पादन क्षमता घट सकती है।

अन्य उपयोग :–

मृत केंचुओं के शरीर के गलने से नत्रजन की उपलब्धता बढ़ती है। केंचुए चूंकि प्रोटीनयुक्त हैं अतः पशुओं, पोल्ट्री या मछलियों के लिए आहार के रूप में प्रयोग किये जा सकते हैं। यूनानी चिकित्सा पद्धति में सूखे केंचुए से तैयार लेप को बवासीर, गलने का घाव, कटने का घाव, गले की खराश व हार्निया आदि के ईलाज के लिए प्रयोग किया जाता है। इसे पीसकर तैयार दवा साँस की बीमारियों, पीलिया, जोड़ों के दर्द व यौन समस्याओं में प्रयोग की जाती है।

2. वर्मीकल्चर

केंचुआ पालन की तकनीक वर्मीकल्चर कहलाती है। वर्मीकल्चर मकान के अन्दर या बाहर दोनों जगह की जा सकती है। लकड़ी के बॉक्स या प्लास्टिक की ट्रे का प्रयोग करके केंचुआ पालन हो सकता है। प्लास्टिक की ट्रे ऊपर–नीचे भी रखी जा सकती हैं। बॉक्स/ट्रे का आकार आवश्यकतानुसार रखा जा सकता है। बॉक्स/ट्रे में नीचे 1–2 इंच रेत की परत बिछायें, इसके ऊपर इतनी ही मिट्टी की परत बिछानी चाहिए। इसके ऊपर कार्बनिक पदार्थ की परत डालनी चाहिए। कुल ऊँचाई 1 फुट उचित रहती है।

बाहर खुले स्थान पर भी बैड बनाकर केंचुआ पालन किया जा सकता है। इसके लिए पेड़ की छाया या शैड बनाना जरूरी है। बैड का आधार पक्का बनायें। चौड़ाई तीन फुट रखें व लम्बाई सुविधानुसार रखें। चारों तरफ 6 ईंच ऊँचाई की दीवार निकालें। बैड में नीचे 1–2 ईंच मिट्टी की परत डालें, इसके ऊपर गोबर व कार्बनिक पदार्थ का मिश्रण डालें। कुल उंचाई 1 फुट तक ही रखें। गाय का गोबर, प्रैस मड व बायोगैस स्लरी का प्रयोग वर्मीकल्चर हेतु सर्वोत्तम है। कल्चर माध्यम में उचित नमी (कुल संग्रहण क्षमता का 75%) बहुत जरूरी है। प्रत्येक बॉक्स में 20–25 केंचुए छोड़ दें। बैड में 500 केंचुए/घन मीटर आयतन के हिसाब से डालें। ऊपर बोरी से ढ़क देना चाहिए। ध्यान रहे कि कल्चर माध्यम में कार्बनिक पदार्थ की कमी न रहने पाये। अगर कम वॉट का बल्ब बॉक्स/ट्रे के ऊपर जला दिया जाए तो केंचुए बाहर नहीं निकलेंगे। देसी नुस्खे के तौर पर अगर चीनी/गुड़ का घोल बनाकर डाला जाए तो केंचुओं के बढ़वार की गति बढ़ जाती है। मकान से बाहर केंचुआ पालन की दशा में बैड को सर्दियों में धान की पराली, कड़बी आदि से ढक देना चाहिए।

वर्तमान में केंचुओं का बिक्री मूल्य 250–500 रूपये प्रति किलोग्राम की दर से है। अतः किसान भाई इस प्रकार लाभ कमा सकते हैं या स्वयं प्रयोग के लिए केंचुआ पालन कर बचत कर सकते हैं। आने वाले वर्षों में केन्द्र व राज्य सरकारें कार्बनिक कृषि व ठोस कचरा प्रबन्धन पर बल देने जा रही है। ऐसे में केंचुओं की उपलब्धता आवश्यक होगी। इस स्थिति में किसान केंचुआ पालन द्वारा लाभ कमा सकते हैं।

इस समय हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार व कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल के अलावा कुछ गैर–सरकारी संस्थाएं भी केंचुआ पालन कर रही हैं। गैर–सरकारी संस्थाओं में गऊशाला, लाडवा (हिसार), गऊशाला, मटौर (कैथल), मन्थन, पंचकुला, हरियाणा प्रांत में सक्रिय हैं। इसके अतिरिक्त कैथल (मटौर, कमालपुर, टयोंठा) व यमुनानगर में कुछ किसान भी बड़े पैमाने पर वर्मीकल्चर अपना रहे हैं। उपर्युक्त स्थानों से वर्मीकल्चर/वर्मीकम्पोस्ट इकाई शुरू करने हेतु केंचुए प्राप्त किये जा सकते हैं।

3. वर्मीकम्पोस्ट

स्थान :–

वर्मीकम्पोस्ट इकाई छायादार स्थान पर ही लगाई जानी चाहिए। इस प्रकार सीधी धूप बैड पर नहीं गिरेगी व तापमान नियंत्रण में भी आसानी रहेगी। पेड़ों की छाया में या छप्पर बनाकर वर्मीकम्पोस्ट इकाई शुरू की जा सकती है। वानिकी/बागवानी पेड़ों के नीचे वर्मीकम्पोस्ट बैड बनाये जा सकते हैं। शैड बनाने हेतु पेड़ों की लकड़ियां, धान की

परालीं, सरकंडे आदि सस्ते साधनों का प्रयोग करके शैड बनाया जा सकता है। शैड चारों ओर से खुला छोड़ना चाहिए। बैड का ढ़ांचा कच्चा भी रखा जा सकता है व पक्का भी मगर पक्के ढ़ांचे में प्रबन्धन में सुविधा रहती है (चित्र 10–13)।

चित्र 10. स्थायी चद्दर की छत व पक्के बैड वाली वर्मीकम्पोस्ट इकाई

चित्र 11. धान की पुआल/फूस की छत वाली वर्मीकम्पोस्ट इकाई

सामग्री :–

वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए अवशेष पदार्थ जैसे फार्म अवशेष (फसल अवशेष, खरपतवार, पशुओं का छोड़ा चारा, बिछावन), औद्योगिक अवशेष (चींनी मिल की प्रैस मड, खोहीं, शीरा), घरेलू कूड़ा–कर्कट, शहरी कूड़ा–कचरा, गोबर (तीन सप्ताह पुराना), बायो गैस स्लरी, खेत की मिट्टी, पुरानी बोरियां, पानी व छाया की आवश्यकता होती है। कार्बनिक पदार्थों में नत्रजन की मात्रा अच्छी होनी चाहिए ताकि कार्बन : नत्रजन अनुपात 40 : 1 से कम रहे। अतः अधिक नत्रजन वाले पदार्थ जैसे गाय का गोबर/बायोगैस स्लरी अन्य अवशेषों के साथ मिला लेने चाहिए। अगर हम

चित्र 12. बाँस/छंटियों से बनी छत वाली वर्मीकम्पोस्ट इकाई

चित्र 13. पोपलर के नीचे वर्मीकम्पोस्ट इकाई

केवल अधिक कार्बन अंश वाले पदार्थों का प्रयोग करते हैं तो केंचुए मोटे हो जाएंगे तथा उनकी क्रियाशीलता घटेगी। सामग्री डालने वाले बैड की ऊँचाई कम रखनी चाहिए ताकि ढ़ेर में गर्मी उत्पन्न न हो। अगर सामग्री उचित प्रकार से तैयार की गई है तथा यूनिट का प्रबंधन सही है तो 2–2½ फुट तक भी ढ़ेर की ऊँचाई की जा सकती है। मगर वास्तविक परिस्थितियों में पाया गया है कि ढ़ेर की ऊँचाई कम ही रखें। 1–1½ फुट की ऊँचाई उचित है। ऐसा करने से प्रबन्धन में बहुत आसानी रहेगी। खाद तैयारी में लगने वाला समय कम लगेगा।

सभी प्रकार का गोबर वर्मीकम्पोस्ट बनाने हेतु उपयुक्त है। कुछ गैर–सरकारी संस्थाएं जो गौशाला का संचालन भी करती हैं, की धारणा है कि केवल गाय का गोबर ही वर्मीकम्पोस्ट के लिए उपयुक्त है। मगर वैज्ञानिक कसौटी पर गाय या भैंस के गोबर में कोई विशेष अन्तर नहीं है। दोनों प्रकार का गोबर वर्मीकम्पोस्ट हेतु उपयुक्त है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि गाय का गोबर भैंस के गोबर से बेहतर है मगर भैंस का गोबर त्याज्य नहीं है। गाय के गोबर में तापमान प्रबंधन थोड़ा सरल है।

पेड़ों के गिरे पत्ते वर्मीकम्पोस्ट के लिए बहुत अच्छी सामग्री हैं; मगर कुछ पौधे जिनके पत्तों में एल्कलायड या अम्लीयता (खट्टापन) है उनका प्रयोग न करें, जैसे धतूरा, आक, सफेदा, नींबू जाति के पौधे आदि। दो बीजपत्री पेड़ों की पत्तियाँ बहुत बढ़िया सामग्री का कार्य करती हैं।

धान की परालीं किसानों के खेतों पर बहुतायत में उपलब्ध है और खासतौर पर बौनी धान की परालीं तो अधिकांशतया किसान खेत में ही जला देते हैं। पशुओं का छोड़ा हुआ चारा, पशुओं का बिछावन आदि भी बहुत बढ़िया सामग्री का कार्य कर सकते हैं। तालाबों में जलखुम्बी एक भयंकर समस्या है। इस जलखुम्बी का प्रयोग भी बहुत अच्छा वर्मीकम्पोस्ट बनाने में किया जा सकता है।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए सर्वोत्तम सामग्री है – आसपास आसानी से उपलब्ध सामग्री। सब्जी उत्पादक या विक्रेता खराब हो रही सब्जियों का प्रयोग कर सकते हैं, डेयरी पालक गोबर प्रयोग कर सकते हैं, कृषक फसल अवशेष प्रयोग कर सकते हैं तथा घर या रेस्टोरेंट स्वामी रसोई अवशेष आदि का प्रयोग कर सकते हैं। अगर हम वर्मीकम्पोस्ट इकाई के आसपास सुबबूल, अमलताश, ढ़ैंचा आदि लगायें तो इनके पते नत्रजन के बढ़िया स्रोत हो सकते हैं तथा गोबर की कमी में अच्छा कार्य कर सकते हैं। अच्छा वर्मीकम्पोस्ट बनाने हेतु सामग्री का उपयुक्त अनुपात निम्न प्रकार से है :–

मिट्‌टी	–	10%
गोबर	–	20%
अवशेष पदार्थ	–	70%

कम से कम 10% गोबर का प्रयोग वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए जरूरी है क्योंकि शुरूआत में केंचुए गोबर ही खाते हैं। वैसे बायोगैस स्लरी का 2% तक प्रयोग किया जा सकता है। हालांकि इसकी मात्रा उपलब्धि अनुसार बढ़ायी जा सकती है। जीवाणु सक्रियता हेतु खेत की मिट्‌टी का प्रयोग आवश्यक है। एनिजेइक केंचुओं में मिट्‌टी का प्रयोग अत्यंत आवश्यक है मगर एपिजेइक केंचुओं (ईसीनिया) में यह जरूरी नहीं है। हालांकि अकेले गोबर का प्रयोग भी किया जा सकता है, मगर समय के साथ यह सख्त हो जाता है तथा बैड में हवा का संचार कम हो जाता है। अतः हाथ से पलटाई करने की आवश्यकता पड़ती है। अकेले गोबर का प्रयोग करने पर बैड की ऊँचाई 1 फुट से ज्यादा न रखें। गोबर के साथ अवशेष पदार्थ मिलाने से हवा का संचरण अच्छी प्रकार से होता है व फसल अवशेषों का भी अधिकतम सदुपयोग संभव है। वर्मीकम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने के लिए रॉक फास्फेट, बोन मील, जिप्सम आदि प्राकृतिक पदार्थ कार्बनिक अवशेषों के साथ मिलाये जा सकते हैं।

सामग्री तैयारी गड्‌ढ़ा :–

वर्मीकम्पोस्ट इकाई के कोने में एक गड्‌ढ़े का निर्माण करना चाहिए जिसमें गोबर व फसल अवशेष डाले जाएं (चित्र 14)। फसल अवशेषों को काटकर डालें। गोबर व फार्म अवशेषों को गड्‌ढ़े में डालकर रोज पानी से गीला करते रहना चाहिए। इस प्रकार 2–3 सप्ताह में सामग्री बैड में डालने लायक हो जाएगी। केंचुओं को आंशिक रूप से गले कार्बनिक पदार्थ ही देने चाहिएं।

चित्र 14. सामग्री तैयारी गढ्ढे में गोबर एकत्रित करते हुए

विधि :–

अ. गड्‌ढ़ा विधि :–

गड्‌ढ़े की गहराई 6 इंच से 1 फुट तक, चौड़ाई 3 फुट तथा लम्बाई सुविधानुसार होनी चाहिए। यह विधि सर्दियों के लिए विशेषतौर पर ठीक है क्योंकि इससे तापमान नियंत्रित रहता है। हालांकि बारिश के दिनों में पानी अगर अंदर चला जाता है तो परेशानी हो सकती है, इसलिए कोशिश करनी चाहिए कि गड्‌ढ़े से बाहर भी ढलान के रूप में कार्बनिक पदार्थ डाले जाएं ताकि अधिक पानी की अवस्था में पानी गड्‌ढे में न रिसे। गड्‌ढ़ा पक्का या कच्चा किसी भी प्रकार का रखा जा सकता है।

ब. बैड विधि :–

इस विधि में बैड की चौड़ाई 3 फुट तथा लम्बाई सुविधानुसार रखें। बैड कच्चा या पक्का रखा जा सकता है।

हालांकि पक्के बैड में प्रबन्धन आसान रहता है। पक्के बैड में साईड की दीवार 6 इंच से 1 फुट तक रखी जा सकती है। 1–2 जगह पर सुराख छोड़ दिये जाएं ताकि अगर अतिरिक्त पानी हो तो बाहर निकल जाए। बारिश के दिनों में तथा गर्मी में यह विधि ठीक रहती है (चित्र 10–13)।

इन दोनों विधियों के अलावा हम आधा गड्ढ़ा – आधा बैड विधि भी अपना सकते हैं। कम्पोस्ट सामग्री का कुछ भाग जमीन के अन्दर तथा कुछ भाग जमीन से ऊपर होने से तापमान नियंत्रण व प्रबंधन दोनों में आसानी रहती है। अतः सुविधानुसार कोई भी विधि अपना सकते हैं। हालांकि बैड विधि ही ज्यादा उपयुक्त व सुविधाजनक है।

सामग्री डालना :–

बैड/गड्ढ़े में विभिन्न कार्बनिक पदार्थों का मिश्रण बनाकर या परत दर परत निम्न प्रकार प्रयोग किया जा सकता है:–

क) अगर बैड कच्चा हो तो सबसे नीचे साबुत परालीं/कड़बी की 4–5 इंच मोटी परत बिछायें ताकि केंचुए जमीन में नीचे न जाने पायें। अगर बैड पक्का हो तो यह परत बिछाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

ख) इससे ऊपर मिट्टी की 1 इंच मोटी परत बिछायें। यह मिट्टी खेत से लेनी चाहिए, क्योंकि खेत की मिट्टी में जीवाणु होते हैं जो केंचुओं के लिए लाभदायक हैं।

ग) इसके ऊपर 1–1½ फुट गोबर, फसल अवशेष आदि के तैयार मिश्रण की परत डालें।

घ) अगर मिश्रण बनाकर नहीं डालना तो परत दर परत भी कार्बनिक पदार्थ डाले जा सकते हैं ।

- सबसे नीचे 4 इंच गोबर की परत बिछायें।
- इसके ऊपर 1 फुट फसल अवशेष की परत लगायें।
- सबसे ऊपर 2 इंच गोबर की परत डालें।
- परत बिछाते समय पानी का छिड़काव करते रहें।

इस प्रकार तैयार बैड पर कम से कम 500 केंचुए/वर्ग मीटर या 200 केंचुए/क्विंटल सामग्री की दर से उपर छोड़ दें। हालांकि अधिक मात्रा में केंचुए प्रयोग करने से उत्पादन दर में वृद्धि होगी। अतः उपलब्धता अनुसार अधिक केंचुए डाले जा सकते हैं। कुछ समय पश्चात् केंचुए सामग्री के अंदर चले जाएंगे। ऊपर से बोरी से ढक दें तथा इसे गीला कर दें (चित्र 15)। अगर हम केवल एपिजेइक केंचुए जैसे ईसीनिया फीटिडा का प्रयोग कर रहे हैं तो मिट्टी का प्रयोग जरूरी नहीं है। अगर एपिजेइक व एनिजेइक दोनों प्रकार के केंचुओं का प्रयोग कर रहे हैं तो नीचे मिट्टी की एक परत (6 इंच) अति आवश्यक है।

चित्र 15. बैड पर फव्वारे से पानी का छिड़काव

दक्षिणी भारत में इस्माइल (1997) द्वारा एपिजेइक व एनिजेइक केंचुओं का एक साथ प्रयोग करके तकनीक विकसित की गई है। पक्के आधार पर रखे सीधे खड़े सीमेंट के चौड़े पाईप का इकाई के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। सबसे नीचे टूटी इंटें या रोड़े डाले जाते हैं जिसके ऊपर मोटी रेत की परत (2.5–3 इंच) डालें ताकि पानी का उचित रिसाव हो सके। इसके ऊपर 6 इंच मिट्टी की परत बिछायें। इस परत को पानी देकर गीला करें। इस मिट्टी में एपिजेइक व एनिजेइक केंचुए छोड़ दें। इसके ऊपर गोबर डालें तथा भूसे (4 इंच) आदि से ढकें। पानी का छिड़काव करते रहें जब तक कि पूरा बैड नम न हो जाए। ऊपर से इकाई को बोरियों, पत्तों या परालीं आदि से ढक दें। एक माह तक पानी का छिड़काव करते रहें। इस समय तक छोटे बच्चे दिखायी देने लगेंगे जोकि एक अच्छा संकेत है।

31वें दिन आसपास से उपलब्ध अवशेष डालने चाहिएं। बोरी आदि हटाकर अवशेष की परतें बिछायें। एक बार में 2 इंच से ज्यादा परत न बिछायें। हालांकि इतनी परत रोजाना बिछायी जा सकती है मगर नये किसान सप्ताह में दो बार ऐसा करें। पानी का छिड़काव आवश्यकतानुसार करते रहें तथा बैड को बोरियों से ढ़क कर रखें। इस प्रकार डाले गये अवशेषों को थोड़ा ऊपर–नीचे पलटाई करें। जब यूनिट पूरी तरह अवशेष से भर जाए तो केवल पानी देते रहें तथा बीच–बीच में पलटाई करते रहें। 45 दिन बाद वर्मीकम्पोस्ट खाद तैयार हो जाएगी।

नमी प्रबन्धन :–

बैड में उपयुक्त नमी (नमी संग्रहण क्षमता का 75 प्रतिशत) होनी चाहिए। शुरूआत में पानी की आवश्यकता अधिक होती है। अतः आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करें। छिड़काव हेतु फव्वारे का प्रयोग किया जा सकता है (चित्र 15, 17)। गर्मी के महीनों में दिन में 2–3 बार छिड़काव करना पड़ सकता है तथा सर्दियों में दिन में एक बार या आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करें। क्योंकि सर्दी के दिनों में नमी बरकरार रहती है अतः पानी कई–कई दिन तक भी डालने की आवश्यकता नहीं पड़ती। बारिश के दिनों में स्थिति अनुसार पानी छिड़कें। ध्यान रहे कि किसी भी परिस्थिति में पानी की अधिकता न हो वरना दम घुटकर केंचुए बाहर निकल आयेंगे या फिर मर जायेंगे। नमी की कमी में भी श्वसन न कर पाने व कार्बनिक सामग्री से रगड़ खाकर शरीर छिलकर केंचुए मर जाएंगे। बैड की ऊपरी सतह ढलवां होनी चाहिए ताकि अगर अधिक पानी आए तो बह जाए।

चित्र 16. इकाई के चारों ओर पेड़–पौधों की हरी पट्टी

चित्र 17. बैड ढ़कने के लिए पुआल का प्रयोग व नमी प्रबन्धन

अगर बड़े पैमाने पर इकाई स्थापित की जानी है तो पानी छिड़काव की स्वचालित प्रणाली भी स्थापित की जा सकती है। बैड के ऊपर शैड के नीचे पतली पाइपें फिट कर दें जिनमें बारीक सुराख हों या स्प्रिंकलर लगे हुए हों। ओवरहेड टंकी से जोड़कर पाइपों के माध्यम से पानी का छिड़काव किया जा सकता है।

तापमान प्रबन्धन :–

वर्मीकम्पोस्ट इकाई से अधिकतम उत्पादन हेतु उपयुक्त तापमान (28–30^0 सें.) बनाकर रखना आवश्यक है। गर्मी में इकाई के चारों ओर ढ़ैंचा/सनई की एक हरी पट्टी बना लेनी चाहिए जो गर्म हवाओं से बचाव करेगी। हालांकि पेड़ भी लगाये जा सकते हैं जैसे बकैन/डेग/सुबबूल आदि (चित्र 16)। बैड की बोरियों पर बार–बार पानी छिड़कने से तापमान नियंत्रित होता है। अधिक सर्दी के दिनों में हर सप्ताह ताजा गोबर की 1 इंच मोटी परत बिछानी चाहिए ताकि इसकी गर्मी से इकाई का तापमान बरकरार रहे। जमीन के नीचे बैड (गड़ढ़ा विधि) बनाकर भी अत्यन्त गर्मी व अधिक सर्दी से बच सकते हैं। हालांकि केंचुओं की अपनी वातानुकूलन प्रणाली होती है, हमें केवल उन्हें उचित परिस्थितियां प्रदान करनी हैं। पाले से बचाव के लिए ऊपर शैड/छाया जरूरी है। अगर शैड नहीं है तथा खुले में बैड बनाये हैं तो अत्यधिक सर्दी वाले दिनों में साबुत पराली/कड़बी आदि से ढ़कना आवश्यक है (चित्र 17)।

केंचुओं को हानि पहुंचाने वाले कारक :–

आसानी से उपलब्ध कार्बनिक पदार्थ, नमी तथा उचित तापमान की वजह से अन्य जीव भी खुले स्थान पर स्थापित वर्मीकम्पोस्ट इकाइयों की ओर आकर्षित होते हैं। इन इकाइयों की तरफ जो जीव आकर्षित होते हैं वे सभी हानिकारक नहीं हैं। हालांकि बड़ी काली चींटियां तथा सेंटीपाद, चूहे, साँप, मेंढक व पक्षी आदि इन्हें खा सकते हैं। मगर हम यूनिट के ढ़ांचे में थोड़ा परिवर्तन करके इनसे बच सकते हैं। साधारणतया अगर हम नमी पूरी रखते हैं तथा ज्यादा पुराना गोबर प्रयोग नहीं करते तो चींटियां/दखोड़ी आदि से बचाव सम्भव है। पक्षियों से बचाव बोरी से ढककर किया जा सकता है। चूहे के बिलों के आसपास चूहेमार दवाई रखकर मारें या इकाई को जाली से ढ़ककर बचाएं।

चींटियां व दीमक इकाइयों में आ सकती हैं। चींटियों को दूर रखने में एक देसी नुस्खा कारगर है। 20 लीटर पानी में

100 ग्राम मिर्च, 100 ग्राम हल्दी पाउडर व 100 ग्राम नमक तथा थोड़ा वाशिंग पाउडर का घोल बनाकर युनिट के चारों ओर जमीन पर छिड़कें। नीम का तेल (0.5%) भी प्रयोग किया जा सकता है। दीमक के लिए तम्बाकू के घोल का प्रयोग भी किया जा सकता है।

जो सामग्री वर्मीकम्पोस्ट हेतु प्रयोग करनी है वह आंशिक तौर पर गली होनी चाहिए। ताजा गोबर में मिथेन गैस केंचुओं के लिए नुकसानदायक है। ताजा फसल अवशेष प्रयोग करने पर उनके गलने से जो गर्मी उत्पन्न होगी वह भी केंचुओं के लिए हानिकारक है। अधिक पुराना गोबर भी उचित नहीं है।

वर्मीकम्पोस्ट निकालना :–

जब ऊपरी सतह पर दानेदार खाद नजर आने लगे तो समझो कि वर्मीकम्पोस्ट तैयार होने लगा है। 45–60 दिन में जब काफी गहराई तक खाद तैयार हो जाए तो बैड पर पानी छिड़कना बंद कर दें। इस प्रकार बैड में नमी ऊपर से नीचे की ओर चली जाएगी। इस नमी के साथ केंचुए भी नीचे चले जाएंगे। ऊपरी सूखी खाद को हाथ से खुरचकर उतार लें (चित्र 18)। इस प्रकार रोजाना थोड़ा–थोड़ा खाद उतारते रहें जब तक कि पूरी खाद एकत्रित न कर लें (चित्र 19)। अंत में नीचे की मिट्टी वाली परत में केंचुए बच जाएंगे। इसके ऊपर दोबारा से कार्बनिक पदार्थ का मिश्रण डाल सकते हैं तथा पानी डालकर उचित नमी बनायें। केंचुए ऊपरी सतह पर स्वतः ही आ जाएंगे तथा फिर वही प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। डाली गई कुल सामग्री का लगभग 60–65% भाग वर्मीकम्पोस्ट के रूप में प्राप्त होता है। वर्मीकम्पोस्ट में नमी ज्यादा होने पर धूप में सुखा लें। इसे बिल्कुल शुष्क नहीं करना चाहिए, आवश्यक नमी बनाये रखनी चाहिए (चित्र 20)।

चित्र 18. बैड से वर्मीकम्पोस्ट को हाथ से निकालते हुए

चित्र 19. अंडायुक्त वर्मीकम्पोस्ट एकत्रित करते हुए

चित्र 20. वर्मीकम्पोस्ट को उचित नमी तक धूप में सुखाना

एकत्रित किये गये वर्मीकम्पोस्ट में चूंकि कम्पोस्ट के साथ अण्डे भी हैं अतः इन्हें अलग करना अति आवश्यक है। दानेदार वर्मीकम्पोस्ट प्राप्त करने के लिए झारना/छलनी का प्रयोग करना चाहिए। पहले खाद को 7–8 मेस (4 मि.मी. साइज) की जाली से गुजारें। इस प्रकार मोटे पदार्थ जाली के ऊपर रह जाएंगे। फिर दोबारा से इस खाद को 10–11 मेस की जाली (2–2½ मि.मी. साईज) की जाली से गुजारें ताकि अण्डे ऊपर रह जाएं तथा खाद नीचे निकल जाए। अगर इकाई बड़े पैमाने पर है तो मोटरचालित ऑटोमैटिक झारना भी लगा सकते हैं (चित्र 21)। इस प्रकार अच्छी दानेदार वर्मीकम्पोस्ट प्राप्त होगी जोकि चाय–पत्ती की तरह नजर आती है (चित्र 22)। इसे पैक करके बाजार बिक्री हेतु भेजा जा सकता है या अपने प्रयोग हेतु ढ़ेर लगाकर रख सकते है। पैकिंग पॉलीथीन बैग में बेहतर रहती है ताकि इसकी नमी बरकरार रहे (चित्र 23)। हालांकि पोषक तत्वों की मात्रा केंचुओं द्वारा प्रयोग किये जाने वाले पदार्थों पर निर्भर करती है। मगर आमतौर पर वर्मीकम्पोस्ट में अन्य

खादों के मुकाबले ज्यादा पोषक तत्वों की मात्रा होती है (तालिका 7)।

तालिका 7. वर्मीकम्पोस्ट व अन्य कार्बनिक खादों में उपलब्ध मुख्य पोषक तत्वों की मात्रा (%)

कार्बनिक खाद	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
वर्मीकम्पोस्ट	1.0–2.2	1.0–1.5	2.0–3.0
गोबर की खाद	0.4–1.5	0.3–0.9	0.3–1.9
ग्रामीण कम्पोस्ट	0.5–1.0	0.4–0.8	0.8–1.2
शहरी कम्पोस्ट	0.7–2.0	0.9–3.0	1.0–2.0

(स्रोत : दहामा, 2002; रबी फसलों की समग्र सिफारिशें CCSHAU, 2004)

छानने के बाद जो अण्डे प्राप्त होते हैं उन्हें एक अलग बैड बनाकर डाल दें, ताकि अण्डों से निकले बच्चों का बिक्री हेतु या स्वयं प्रयोग हेतु उपयोग किया जा सके। वर्मीकम्पोस्ट इकाई में वर्मीकल्चर बैड अलग बनाने चाहिएं जिनमें अण्डों

चित्र 21. स्वचालित झारने से वर्मीकम्पोस्ट की छनाई

चित्र 22. तैयार दानेदार वर्मीकम्पोस्ट खाद

चित्र 23. पॉलीथीन पैकेटों में वर्मीकम्पोस्ट की पैकिंग

को डालें तथा इस प्रकार निकले बच्चे आगे जरूरत के अनुसार प्रयोग किये जा सकें। वयस्क होने से पहले ही इन बच्चों को वर्मीकम्पोस्ट बैड में स्थानांतरित कर देना चाहिए ताकि उसी बैड में वे अण्डे न देने पायें। इस प्रकार इन बैडों के कम्पोस्ट से अण्डे छानने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

अगर किसान भाई झारने से नहीं छानना चाहते तो वे वर्मीकम्पोस्ट को इसी रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं। चूंकि भूमि में हम रसायनों का प्रयोग करते रहते हैं अतः वर्मीकम्पोस्ट के साथ गये अण्डों/बच्चों को नुकसान होगा। अगर केवल एपिजेइक केंचुए ही प्रयोग किये गये हैं, जोकि खेत की परिस्थितियों में जीवित नहीं रह सकते तो कम्पोस्ट के साथ जो अण्डे चले जाते हैं तो वे खेत में जाकर समाप्त हो सकते हैं। अतः इन्हें अलग करना आवश्यक है।

4. खेत में वर्मीकल्चर :–

अगर हम आसपास उपलब्ध देसी केंचुओं (यूड्रिलस यूजिनी) का प्रयोग करें तो हम सीधे खेत में भी वर्मीकल्चर कर सकते हैं। हालांकि आधुनिक कृषि प्रणालियों की वजह से खेत की परिस्थितियाँ केंचुओं के अनुकूल नहीं हैं। रासायनिक दवाओं के अधिकाधिक प्रयोग, अधिक कृषि यंत्रों के प्रयोग की वजह से केंचुओं की संख्या खेतों में लगभग नगण्य हो गई है। मगर कार्बनिक खेती की ओर चलकर हम खेत में ही वर्मीकल्चर कर सकते हैं। हालांकि ऊपरी सतह पर नमी की कमी होने पर केंचुए मर सकते हैं, अतः ऐसी प्रजातियों का चुनाव करने की जरूरत है जो उस क्षेत्र में उपलब्ध हों तथा गहराई तक जा सकें।

फसल के अवशेष को मिट्टी के साथ मिलाकर ये केंचुए कार्बनिक खाद में परिवर्तित कर देंगे तथा जमीन में सुराख बनाकर हवा का संचार बढ़ायेंगे, जीवाणुओं की सक्रियता

बढ़ेगी और भूमि एक जीवित प्रणाली के तौर पर कार्य करेगी। जैविक क्रियाशीलता वाली भूमि ही हमें टिकाऊ उपज प्रदान कर सकती है। खेत में ही केंचुआ पालन करके हम अपनी फसल का पोषण व प्रबन्धन का दायित्व इन केंचुओं पर छोड़ सकते हैं। ऐसी भूमि में जलधारण क्षमता बढ़ेगी, पी.एच. मान सुधरेगा, पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ेगी और मिट्टी का कटाव भी रुकेगा। गन्ने के खेत में, बाग–बगीचे में, सब्जियों वाले खेत में हम इस प्रकार केंचुआ पालन कर सकते हैं, जहां पत्तियां/अवशेष आदि उपलब्ध होते रहें तथा छायादार नमीयुक्त स्थान भी उपलब्ध हो।

एक आकलन के अनुसार 1 लाख केंचुए एक महीने में 12 टन कार्बनिक अवशेष को जैविक खाद में परिवर्तित कर सकते हैं। खेत में मिट्टी व कार्बनिक अंश खाकर निकली केंचुआ विष्टा (वर्मीकाष्ट) में सामान्य मिट्टी की अपेक्षा 5 गुणा नत्रजन, 7 गुणा फास्फोरस, 11 गुणा पोटाश, 2 गुणा मैग्नीशियम तथा कैल्शियम होता है। इसके अलावा अन्य तत्व भी आसानी से उपलब्ध होते हैं। एक्टिनोमाइसिट जीवाणुओं की संख्या भी इनमें 7–8 गुणा ज्यादा होती है।

5. किचन वर्मीकम्पोस्ट :–

सब्जियों/फलों के छिलकों के रूप में रसोईघर में काफी मात्रा में अवशेष पदार्थ मिलते हैं। जो भी कार्बनिक किस्म का अवशेष पदार्थ घर से निकलता है उसका वर्मीकम्पोस्ट बनाकर सदुपयोग किया जा सकता है। किचन कम्पोस्ट इकाई स्थापित करके तैयार वर्मीकम्पोस्ट से हम अपने किचन गार्डन/गृह वाटिका में प्रयोग कर सकते हैं।

दो लकड़ी की पेटियाँ (लगभग 2' x 3' आकार) लें या कोने में पक्के बैड बनायें। ऊँचाई लगभग 1.5 फुट हो। इसमें नीचे साबुत पराली/1–2 इंच भूसे की परत बिछायें या कूलर के पुराने पैड डालें। इसके ऊपर मिट्टी की 1–2 इंच परत बिछायें। पानी छिड़क कर गीला करें। फिर 3–4 इंच गोबर की परत डालें। गोबर 2–3 सप्ताह पुराना हो। इसमें लगभग 50 केंचुए छोड़ दें। इसके ऊपर घर/रसोईघर से प्राप्त कार्बनिक कूड़ा कचरा डालते रहें। ऊपर से बोरी से ढक दें। जब पूरी पेटी भर जाए तो दूसरी पेटी में इसी प्रकार सामग्री डालें। दोनों पेटियों में समय–समय पर पानी छिड़ककर नमी बनाये रखें। जब तक दूसरी पेटी भरेगी तब तक पहली पेटी में खाद बनकर तैयार हो जाएगी। जब खाद तैयार हो जाए तो पानी डालना बंद कर दें। नमी के साथ केंचुए नीचे मिट्टी की परत में चले जाएंगे। अब वर्मीकम्पोस्ट को बाहर निकालकर अपनी गृहवाटिका में प्रयोग कर सकते हैं। खाद को छानकर प्रयोग करने से अंडे अलग किए जा सकते हैं जिनसे दोबारा किचन कम्पोस्ट बॉक्स में डालकर केंचुओं की संख्या बढ़ायी जा सकती है।

6. वर्मीवाश :–

ताजा वर्मीकम्पोस्ट व कुंचओं के शरीर को धोकर जो पदार्थ तैयार होता है उसे वर्मीवाश कहते हैं। हालांकि भिन्न–भिन्न स्थानों पर विभिन्न संस्थाओं/व्यक्तियों द्वारा अलग–अलग विधियां अपनायी जाती हैं, मगर सबका मूल सिद्धान्त लगभग एक ही है। विभिन्न विधियों से तैयार वर्मीवाश में तत्वों की मात्रा व वर्मीवाश की सांद्रता में अन्तर हो सकता है।

वर्मीवाश इकाई बड़े बैरल/ड्रम, बड़ी बाल्टी या मिट्टी के घड़े का प्रयोग करके स्थापित की जा सकती है। प्लास्टिक, लोहे या सीमेन्ट के बैरल प्रयोग किये जा सकते हैं जिसका एक सिरा बन्द हो और एक सिरा खुला हो। सीमेंट का बड़ा पाईप भी प्रयोग किया जा सकता है। इस पाईप को एक ऊँचे आधार पर खड़ा रखकर नीचे की तरफ से बंद करें। नीचे की तरफ आधार के पास साईड में छेद (1 इंच चौड़ा) करें । इस छेद में T–पाईप डालकर वाशर की मदद से सील करें। अंदर की ओर आधा इंच पाईप रखें तथा बाहर इतना कि नीचे बर्तन आसानी से रखा जा सके। बाहर T–पाईप के छेद में नल फिट करें तथा दूसरे छेद में नट लगायें जोकि पाईप की समय–समय पर सफाई के काम आएगा। यह नल सुविधानुसार बैरल की पेंदी में भी लगाया जा सकता है।

इस्माइल (1997) द्वारा प्रयुक्त वर्मीवाश इकाई की कार्यप्रणाली इस प्रकार है। नल को खुला छोड़ कर बैरल में 2–4 इंच मोटे ईंट के टुकड़े या रोड़ी की 10–12 इंच मोटी परत बिछायें। इस पर पानी डालें जोकि नीचे से निकल जाए। इसके ऊपर मोटे रेत की 8–12 इंच परत बिछायें। फिर पानी डालें तथा नीचे नल से निकालें। इसके ऊपर 1–1.5 फुट दोमट मिट्टी की परत बिछायें। इसे गीला करें तथा 50–50 एपिजेइक व एनिजेइक केंचुए डालें। अगर सिर्फ एपिजेइक केंचुओं का प्रयोग करना हो तो मिट्टी की आवश्यकता नहीं है। केवल 2–4 इंच मिट्टी की परत डाल सकते हैं। इसके ऊपर गोबर की परत डाल दें। धीरे–धीरे पानी डालें तथा अतिरिक्त पानी निकल जाने के बाद नल

बन्द कर दें। 20–25 मिनट नल को खुला रखते हुए रोजाना इकाई को नम करें। इस दौरान केंचुए वर्मीकम्पोस्ट बनाना शुरू कर देंगे।

लगभग 16 दिन बाद, जब इकाई तैयार हो जाए, नल को बंद करके पांच लीटर क्षमता का एक बर्तन, जिसमें नीचे बारीक सुराख हों, इकाई के ऊपर लटका दें ताकि बूंद–बूंद पानी नीचे गिरे। यह पानी धीरे–धीरे कम्पोस्ट के माध्यम से गुजरता है और ताजा वर्मीकम्पोस्ट से तत्व लेकर अपने साथ घोल लेता है। साथ ही केंचुओं के शरीर को धोकर भी पानी गुजरता है। नल को अगले दिन वर्मीवाश एकत्रित करने के लिए खोल लिया जाए। इसके बाद नल को बंद कर दिया जाए तथा ऊपर वाले बर्तन में पानी भर दिया जाए ताकि उसी प्रकार वर्मीवाश एकत्रित करने की प्रक्रिया चलती रहे। इकाई को ऊपर से बोरी वगैरह से ढककर रखना चाहिए।

इकाई की ऊपरी सतह पर एकत्रित वर्मीकम्पोस्ट को समय–समय पर बाहर निकाला जा सकता है तथा गोबर व अवशेष डाले जा सकते हैं। या जब तक पूरा बैरल भर न जाए इसी प्रकार ऊपर फसल अवशेष डालते रहें तथा उसके बाद कम्पोस्ट को निकालकर दोबारा से सामग्री भरें।

वर्मीवाश को इसी स्वरूप में स्टोर किया जा सकता है या धूप में सांद्रीकरण करके स्टोर कर सकते हैं। प्रयोग के समय इसमें पानी मिलाया जा सकता है। जो प्रयोगकर्ता की जरूरतों के अनुसार हो सकता है।

इकरीसेट, हैदराबाद में डॉ. ओ.पी. रूपेला द्वारा अपनायी जा रही वर्मीवाश विधि उपरोक्त विधि का ही एक प्रारूप है। इसमें फिल्टर के रूप में एक बदलाव किया गया है। एक गोलाकार चोड़ा सीमेंट का पाईप एक प्लेटफार्म पर रखकर सीमेंट से जोड़ें। इसके ऊपर एक और सीमेंट का पाईप रखें। दोनों के बीच एक मोटी लोहे की जाली रखें तथा सीमेंट से जोड़ें। नीचे वाले पाईप के साईड में नीचे एक नल लगायें। लोहे की जाली के ऊपर प्लास्टिक की जाली रूपी फिल्टर बिछायें जिसके किनारे बैरल से बाहर निकले हों। फिल्टर के ऊपर गोबर डालें व केंचुए (ईसीनिया फीटिडा) डाल दें। इसके ऊपर फसल अवशेष/पत्तियों आदि की 3–4 इंच मोटी परत बिछायें। यह अवशेष उसी रूप में या 2% गोबर की स्लरी से भिगोकर डाल सकते हैं। प्रति सप्ताह इसी प्रकार अवशेष की परत बिछाते रहें। समय–समय पर पानी छिड़कते रहें। उचित तापमान बनाकर रखें। ऊपर से पाईप को एक पोटली, जिसमें पत्ते/पराली वगैरह भरे हों, से ढ़क देना चाहिए ताकि नमी बरकरार रहे तथा अंधेरा भी रहे।

लगभग 1 माह बाद जब अच्छी वर्मीकम्पोस्ट बनने लग जाए तो वर्मीवाश लेना शुरू कर सकते हैं। ऊपर फव्वारे के रूप में धीरे–धीरे पानी डालें जोकि इकाई से गुजरता हुआ नीचे निकलेगा। चूंकि इकाई का निचला आधा हिस्सा खाली है अतः फिल्टर के माध्यम से पानी नीचे चला जाएगा।

चित्र 24. वर्मीवाश इकाई

चित्र 25. तैयार वर्मीवाश

कैथल में अपनायी जा रही वर्मीवाश इकाईयां भी उपरोक्त सिद्धान्तों पर ही कार्यरत हैं। हालांकि सामग्री व संचालन में कुछ अन्तर है। ड्रम में नीचे रोड़ी, बजरी, रेता आदि का प्रयोग करके फिल्टर तैयार करें। इसके ऊपर वर्मिंग मिश्रण (केंचुआ युक्त वर्मीकम्पोस्ट) डालें। इसे बोरी से ढकें। ऊपर छिद्र युक्त बर्तन लटकाएं जिससे बूंद–बूंद पानी टपके। दिन में लगभग 10 लीटर पानी यूनिट से बाहर निकालें। इस वर्मीवाश की सांद्रता बढ़ाने के लिए इसे दोबारा से इकाई के माध्यम से गुजारें। इस प्रकार 4–5 चक्रों के बाद सुनहरे रंग का वर्मीवाश तैयार हो जाता है (चित्र 24–25)।

वर्मीकम्पोस्ट इकाई का प्रारूप एवं आर्थिक विश्लेषण

प्रारूप

1. शैड/छप्पर :–

बांसों, पेड़ों की लकड़ियों के सहारे ढांचा बनाकर आसानी से उपलब्ध सस्ते पदार्थों जैसे पराली, सरकंडे आदि या पॉलीथीन डालकर शैड बनाया जा सकता है।

2. मिश्रण तैयारी गड्ढ़ा :–

एक गड्ढ़ा बनायें जिसमें कार्बनिक पदार्थों को 2–3 सप्ताह तक रख कर वर्मी बैड में डालने योग्य बनाया जा सके।

3. वर्मी बैड :–

तीन फुट चौड़े बैड बनायें। अगर पक्के बैड बनाये जाएं तो अच्छा रहता है। इसके लिए पुरानी ईंटों का प्रयोग भी किया जा सकता है। बैड की लम्बाई अपनी सुविधानुसार रखें। बैड की साईड की दीवार 6 इंच ऊँची बनायें। बैड का फर्श पक्का बनाएं। दो बैड साथ–साथ बनाएं ताकि बीच की दीवार सांझी हो जाए। एक बैड वर्मीकल्चर हेतु अलग रखें तथा शेष बैडों में वर्मीकम्पोस्ट तैयार करें।

4. वर्मी मिश्रण (बीज) :–

इकाई को शुरू करने के लिए लगभग 500 केंचुए प्रति घन मीटर की दर से चाहिएं।

5. रास्ते एवं पानी आपूर्ति :–

आसानी से घूमने–फिरने, हाथ से चलने वाली छोटी ट्राली (हैंड कार्ट) द्वारा सामग्री/खाद इधर–उधर ढोने हेतु बैडों के अगल–बगल जगह खाली छोड़नी चाहिए। पानी का साधन भी वर्मीकम्पोस्ट इकाई के पास होना चाहिए। अगर बड़े पैमाने पर इकाई स्थापित कर रहे हैं तो अलग से व्यवस्था की जा सकती है वरना छोटे पैमाने पर इकाई ऐसे स्थान पर लगायें जहां पहले से ही पानी का स्रोत है। पानी छिड़कने हेतु हाथ वाले फव्वारे का प्रयोग किया जा सकता है या बैडों के ऊपर 1/2 ईंच साईज के पाईप लगाकर (जिनमें सुराख हों) इन्हें ओवर हैड टंकी से जोड़कर पानी आपूर्ति की जा सकती है। हालांकि इस मद में कम से कम खर्च करने की कोशिश करनी चाहिए।

6. मशीनरी :–

फसल अवशेषों की कटाई हेतु कटर/गंडासे की आवश्यकता पड़ेगी। आमतौर पर किसान भाइयों के पास पहले से ही यह मशीन उपलब्ध होगी। इसे पशु–चारा काटने के साथ वर्मीकम्पोस्ट इकाई हेतु भी प्रयोग किया जा सकता है। अगर बड़े पैमाने पर इकाई लगानी है तो अलग से प्रबन्ध करना चाहिए। अन्य उपकरण जैसे फव्वारा, कस्सी, हैंड कार्ट, झारना, तुलाई मशीन, बैग, सीलिंग मशीन आदि इकाई के आकार अनुसार जरूरत पड़ेगी। अगर स्वयं प्रयोग हेतु ही छोटी इकाई लगानी है तो तुलाई मशीन व सीलिंग मशीन जरूरी नहीं हैं। बड़ी इकाई हेतु मशीन चालित ऑटोमैटिक झारना (8 व 11 मेस की छलनी युक्त) बनवाया जा सकता है।

7. हरी पट्टी :–

इकाई के चारों ओर छायादार पेड़ जैसे डेग/बकैन/सुबबूल लगायें ताकि छाया बनी रहे, तापमान नियंत्रण में आसानी हो।

8. वर्मीवाश इकाई :–

वर्मीवाश इकाईयां भी अपनी आवश्यकतानुसार स्थापित करनी चाहिएं।

नोट :–

अगर बागवानी/वानिकी के पेड़ खेत में लगाये हुए हैं तो उनके बीच में उपलब्ध स्थान में बैड लगाकर वर्मीकम्पोस्टिंग की जा सकती है। इस प्रकार शैड बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। सर्दियों के दिनों में ध्यान रखें कि बैड को पराली/कड़बी/सरकंडे आदि से ढकें ताकि पाले से बचा जा सके।

आर्थिक विश्लेषण :–

पांच एकड़ जोत का किसान जिसके पास 1–2 गाय/भैंस हैं, उसके पास औसतन 150 क्विंटल वार्षिक फार्म अवशेष उपलब्ध हो सकते हैं। ऐसे किसानों द्वारा स्वयं प्रयोग/ व्यावसायिक स्तर पर वर्मीकम्पोस्टिंग हेतु आर्थिक विश्लेषण आगे दिया गया है।

इकाई आकार	: 3X60 फुट
कुल वार्षिक अवशेष का प्रयोग	: 150 क्विंटल
कुल लक्षित वार्षिक वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन	: 90 क्विंटल

अचल लागत :–

1.	ढ़ांचा निर्माण	: 5000 रू
2.	वर्मिंग हेतु केंचुए (20 किलो @ 300 रू/किलो)	: 6000 रू
3.	औजार (कस्सी, फव्वारा, हैंडकार्ट आदि)	: 1000 रू
	कुल अचल लागत	: 12000 रू

चल लागत :–

1.	अचल लागत का वार्षिक मूल्य (10%)	: 1200 रू
2.	अचल लागत पर वार्षिक ब्याज (10%)	: 1200 रू
3.	कार्बनिक सामग्री की लागत	
	गोबर/स्लरी 30 क्विं. @ 200 रू/टन	: 600 रू
	धान की पराली/अन्य अवशेष 120 क्वि.	: 1000 रू
4.	मजदूरी 30 मजदूर वार्षिक @100 रू प्रति मजदूर	: 3000 रू
5.	बोरियां व अन्य	: 1000 रू
	कुल चल लागत	: 8000 रू

आमदनी :–

1.	वर्मीकम्पोस्ट से कुल आय (90 क्विं. @ 200 रू/क्विं.)	: 18000 रू
2.	केंचुओं की बिक्री से आय (60 किलो @ 300 रू/किलो)	: 18000 रू
3.	कुल आय	: 36000 रू
4.	कुल चल लागत	: 8000 रू
5.	शुद्ध आय	: 28000 रू
6.	लागत : आय अनुपात	: 1 : 4.5

हालांकि किसान भाई व्यावसायिक स्तर पर इसे अपनाकर लाभ कमा सकते हैं। मगर हमारा उद्देश्य स्वयं के फार्म पर उपलब्ध अवशेषों से अच्छी खाद तैयार करके अपनी भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखना है। अगर किसान स्वयं वर्मीकम्पोस्ट खाद तैयार करें तो कम लागत में खाद उपलब्ध होगी तथा समन्वित कृषि प्रणाली अपना सकेंगे। अतः व्यावसायिक स्तर पर न जाकर भी हम स्वयं के उपयोग हेतु अपने फार्म अवशेषों का बेहतर प्रबन्धन कर सकते हैं।

धान–गेहूँ में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन

रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग के बावजूद धान–गेहूँ फसल–चक्र की उत्पादकता में कमी महसूस की जा रही है। भूमि के कार्बनिक अंश में कमी इसका प्रमुख कारण है। अतः रासायनिक उर्वरकों के अतिरिक्त कार्बनिक स्रोत के माध्यम से तत्व आपूर्ति एक उचित विकल्प है। तत्वों के संतुलित प्रयोग के अलावा रासायनिक व कार्बनिक स्रोतों से प्राप्त तत्वों का समन्वित प्रयोग व उनकी उपयोग क्षमता में वृद्धि द्वारा ही टिकाऊ कृषि की ओर अग्रसर हो सकते हैं (परोदा, 2003)।

हरी खाद :–

हरी खाद के लिए उत्तम फसलें हैं – ढ़ैंचा, सनई, ग्वार, लोबिया, मूंग, उड़द आदि। विभिन्न हरी खाद फसलों द्वारा उपलब्ध तत्वों की मात्रा तालिका 2 में दी गई है। ढ़ैंचा धान–गेहूँ फसल चक्र में सरलता से समाहित हो सकता है जो प्रतिकूल परिस्थिति में भी अच्छी पैदावार दे सकता है। गेहूँ कटाई उपरान्त अप्रैल–जून तक ढ़ैंचा की हरी खाद ली जा सकती है। खेत तैयार करके या बैगर जुताई किए भी इसकी बीजाई की जा सकती है। हरी खाद से 20–25 किलोग्राम नत्रजन प्रति एकड़ उपलब्ध होती है (तालिका 8)। ढ़ैंचा की हरी खाद से बौनी धान में पोषक तत्वों की मात्रा एक–तिहाई कम की जा सकती है तथा बासमती धान की काश्त बगैर उर्वरकों के भी संभव है। धान में डाली जाने वाली फास्फोरस की मात्रा ढ़ैंचा में प्रयोग की जा सकती है। इससे हरी खाद अच्छी बनेगी तथा धान में फास्फोरस खाद की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

जैव उर्वरक :–

भविष्य में पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु जैव–उर्वरकों का विशेष महत्व होगा, चूंकि यह कम लागत वाला, हल्का, पर्यावरण अनुकूल व अक्षुण स्रोत है। धान–गेहूँ फसल–चक्र में एजोटोबैक्टर, एजोस्पीरिलम, नील हरित शैवाल, एजोला, पी.एस.एम., वी.ए.एम. आदि महत्वपूर्ण हैं। भारत में मात्र 6000 टन जैव–उर्वरकों का उत्पादन किया जाता है जबकि चीन में 1,00,000 टन से अधिक जैव–उर्वरक प्रयोग किए जाते हैं। अतः इस दिशा में प्रगति की काफी संभावनाएं हैं (परोदा, 2003)।

धान में नील हरित शैवाल के 4 किलोग्राम/एकड़ प्रयोग से 8–12 किलोग्राम नत्रजन/एकड़ की उपलब्धि संभव है। एजोला 2.5–5 टन/एकड़ प्रयोग करके 10–20 किलोग्राम नत्रजन/एकड़ के समान उपज वृद्धि प्राप्त की जा सकती है। एजोटोबैक्टर/एजोस्पीरिलम द्वारालगभग 8 किलोग्राम नत्रजन/एकड़ उपलब्ध हो सकती है (तालिका 8)।

इसके अलावा पी.एस.एम. अनुपलब्ध फास्फोरस को उपलब्ध रूप में परिवर्तित करते हैं। चूंकि फास्फोरस उर्वरकों की उपयोग क्षमता कम है, ऐसे में पी.एस.एम. का विशेष महत्व है। वी.ए.एम. फसल की जड़ों के अवशोषण क्षेत्र में वृद्धि करते हैं तथा तत्वों की उपलब्धता के अतिरिक्त पादप वृद्धि नियामक उत्पन्न करते हैं।

संतुलित उर्वरक :–

नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश तत्वों का प्रयोग अनुपात 4:2:1 के उचित स्तर से अधिक बढ़ने की वजह से भूमि की

तालिका 8. जैविक एवं कार्बनिक खादों का उपज में परिलक्षित उर्वरक समतुल्य

खाद	प्रयोग स्तर	उर्वरक समतुल्य
गोबर की खाद	6 टन/एकड़	3.6 किलोग्राम NPK/टन
हरी खाद (ढ़ैंचा)	45 दिन अवस्था	20–25 किलोग्राम नत्रजन/एकड़
एजोटोबैक्टर/एजोस्पीरिलम	टीकाकरण	8 किलोग्राम नत्रजन/एकड़
नील हरित शैवाल	4 किलोग्राम/एकड़	8–12 किलोग्राम नत्रजन/एकड़
एजोला	2.5–5 टन/एकड़	3–4 किलोग्राम नत्रजन/एकड़

(स्रोत : टंडन, 1994)

उर्वरा शक्ति, फसल उत्पादकता तथा फसल उत्पाद की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है (परोदा, 2003)। यूरिया खाद के अधिक उपयोग व पोटाश तत्व की अनदेखी की वजह से गंभीर दुष्परिणामों की आशंका है। अतः विभिन्न स्रोतों से प्राप्त तत्वों का संतुलित मात्रा में प्रयोग अति आवश्यक है। सामान्य तथा धान/गेहूँ में 60 किलोग्राम नत्रजन, 24 किलोग्राम फास्फोरस व 24 किलोग्राम पोटाश प्रति एकड़ (मिट्टी जांच आधारित) की आवश्यकता होती है।

उर्वरक क्षमता संवर्धन :–

प्रयोग किए गए नत्रजन उर्वरक का धान द्वारा मात्र 20–25% तथा गेहूँ द्वारा 45–50% ही उपयोग किया जाता है। नत्रजन उर्वरकों की उपयोग क्षमता में 1% वृद्धि द्वारा देश के खाद्यान्न उत्पादन में 1 मिलियन टन की वृद्धि की जा सकती है (परोदा, 2003)।

नीम लेपित यूरिया, यूरिया सुपर ग्रेन्यूल का प्रयोग, फसल की आवश्यकतानुसार, उचित अवस्था पर व उचित नमी में उर्वरक प्रयोग, नत्रजन का बँटी मात्रा (split) में प्रयोग, धान में अमोनियम–नत्रजन का भूमि की आक्सीजन–रहित परत में प्रयोग, पर्णीय छिड़काव, भूमि में नत्रजन रिसाव में कमी, फास्फोरस उर्वरक की ड्रिलिंग, मिट्टी जांच आधारित उर्वरक उपयोग अपनाकर इस दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

लीफ कलर चार्ट :–

नत्रजन उर्वरक का फसल के रंग पर आधारित प्रयोग नया सिद्धान्त है। अंतर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान द्वारा धान के लिए लीफ कलर चार्ट तैयार किया गया है, जिसका प्रयोग करके हम नत्रजन उर्वरक का सदुपयोग कर सकते हैं। कैथल में किए गए शोधों में धान में लीफ कलर चार्ट आधारित नत्रजन प्रयोग करने से अधिक उपज प्राप्त की गई। हालांकि उपज सिफारिशसुदा उर्वरक उपयोग से सांख्यिकीय आधार पर समान ही थी, मगर शीथ रॉट बीमारी में उल्लेखनीय कमी पाई गई (तालिका 9)। इस प्रकार समन्वित कृषि प्रणाली में यह सहायक है।

कार्बनिक खाद :–

दीर्घकालीन शोधों में पाया गया है कि खरीफ फसल की नत्रजन आवश्यकता की पूर्ति गोबर की खाद से की जा सकती है, तथा फसल–चक्र उत्पादकता भी बरकरार रहती है (पालनियप्पन व अन्य, 1999)। गोबर की खाद के उर्वरक समतुल्य का 3.6 किलोग्राम NPK/टन आकलन किया गया है (तालिका 8)। धान में प्रयोग की गई गोबर की खाद का गेहूँ की फसल पर 25% अवशेष प्रभाव देखा गया है। धान में 6 टन/एकड़ गोबर की खाद प्रयोग करने के बाद गेहूँ में नत्रजन/फास्फोरस 12 किलोग्राम/एकड़ की बचत करके भी समान उपज प्राप्त की जा सकती है (गिल एवं मीलू, 1982)।

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में किए दीर्घकालीन शोधों अनुसार 6 टन/एकड़ गोबर की खाद प्रयोग करने पर फास्फोरस, पोटाश व अन्य तत्वों के प्रयोग की आवश्यकता नहीं है, मगर उच्च उपज स्तर प्राप्त करने हेतु नत्रजन उर्वरक सिफारिशसुदा स्तर पर बनाए रखना आवश्यक है (सिंह, 2002)। अन्य कार्बनिक खादों (कम्पोस्ट, पोल्ट्री खाद, प्रैस मड आदि) का प्रयोग भी उपलब्धता एवं पोषक तत्वों की मात्रा अनुसार किया जा सकता है। सामान्यतया कम्पोस्ट 6 टन/एकड़, पोल्ट्री खाद 2 टन/एकड़ तथा प्रैस मड 3 टन/एकड़ प्रयोग करनी चाहिए।

तिलहन खलियां :–

विभिन्न तिलहन खलियां जैसे बिनौले की खली, सरसों की खली, तिल की खली, मूंगफली की खली, नीम की खली, अरन्ड की खली आदि का प्रयोग रासायनिक उर्वरकों

तालिका 9. लीफ कलर चार्ट आधारित नत्रजन प्रयोग का धान पर प्रभाव

उर्वरक प्रयोग (किलोग्राम/एकड़)	उपज (क्विं./एकड़)	शीट रॉट बीमारी (%)
सिफारिशसुदा उर्वरक (60–24–24–10)*	21.60	40.2
लीफ कलर चार्ट आधारित नत्रजन + अन्य उपरोक्त (LCC4–24–24–10)*	22.73	32.3
नत्रजन 150 किलोग्राम/एकड़	19.60	45.1

*किलोग्राम नत्रजन–फास्फोरस–पोटाश–जिंक सल्फेट प्रति एकड़

(स्रोत : यादव व अन्य, 2005, व्यक्तिगत सूचना)

के साथ किया जा सकता है। खली प्रयोग की मात्रा उनमें उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा पर निर्भर करेगी। विभिन्न खलियों में पोषक तत्वों की मात्रा तालिका 1 में दी गई है।

वर्मीकम्पोस्ट/वर्मीवाश :–

धान–गेहूँ फसल–चक्र में फसल अवशेष बहुतायत में उपलब्ध है, जिन्हें अधिकांशतया जला दिया जाता है। इस प्रकार बहुमूल्य कार्बनिक संसाधन का ह्रास होने के अलावा पर्यावरण भी प्रदूषित हो रहा है। कृषि में प्रयोग हेतु गोबर की उपलब्धता कम है। अतः फसल अवशेषों का गोबर के साथ प्रयोग करके केंचुओं द्वारा वर्मीकम्पोस्ट तैयार करके रासायनिक उर्वरकों के साथ समन्वित प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार अधिकाधिक क्षेत्र कार्बनिक खादों के अंतर्गत लाया जा सकता है।

हालांकि प्रयुक्त अवशेष सामग्री के अनुसार ही वर्मीकम्पोस्ट में पोषक तत्व होते हैं, मगर सामान्यतया गोबर की खाद व कम्पोस्ट से अधिक मात्रा में पोषक तत्व प्राप्त होते हैं (तालिका 7)। अतः उपलब्ध तत्वों की मात्रा अनुसार इसे गोबर की खाद की अपेक्षा कम मात्रा में प्रयोग किया जा सकता है। हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के तजुर्बों के अनुसार वर्मीकम्पोस्ट का 2–4 टन/एकड़ की दर से प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार एक चौथाई से एक तिहाई नत्रजन तथा पूरी फास्फोरस, पोटाश, जिंक व अन्य तत्वों की पूर्ति की जा सकती है (सिंह, 2002)। रॉक फास्फेट, बोन मिल, जिप्सम मिश्रित पदार्थों से तैयार वर्मीकम्पोस्ट में तत्वों की मात्रा अधिक होगी। अतः संवर्धित वर्मीकम्पोस्ट की मात्रा कम प्रयुक्त होगी। चूंकि वर्मीकम्पोस्ट के दानों की संरचना में स्थायीत्व होता है, अतः ये मिट्टी में कार्बनिक बैंक के रूप में कार्य करेगें तथा आगामी फसलों को भी अवशेष तत्व उपलब्ध होते रहेंगे।

वर्मीवाश अत्यंत लाभकारी पदार्थ है, जिसका पर्णीय छिड़काव करके फसल को आवश्यक पोषक तत्वों की तुरन्त आपूर्ति की जा सकती है। इसके अतिरिक्त बीमारी रोधक व पादप वृद्धिकारक हार्मोन/एंजाइम युक्त होने की वजह से फसल पर इनका उल्लेखनीय प्रभाव पड़ता है। प्रयोग की मात्रा इसकी निर्माण विधि व सांद्रता पर निर्भर करेगी। अभी तक के अनुभव अनुसार आमतौर पर 2–5 लीटर वर्मीवाश/एकड़ छिड़काव हेतु प्रयोग किया जा सकता है। सप्ताह के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार 2–5 छिड़काव किए जा सकते हैं। इस प्रकार वर्मीवाश के प्रयोग द्वारा रासायनिक उर्वरकों की मात्रा कम की जा सकती है।

समन्वित कृषि प्रणाली में वर्मीतकनीक :–

वर्मीतकनीक (वर्मीकम्पोस्ट/वर्मीवाश आदि) का समन्वित कृषि प्रणाली में समावेश किया जा सकता है। फसल अवशेष, पशुओं का गोबर, छोड़ा हुआ चारा, बिछावन आदि का प्रयोग करके वर्मीकम्पोस्ट बनाया जाए जोकि फसल को वापिस पोषण प्रदान करते हेतु खेत में डाला जाए। गोबर को अगर बायोगैस के माध्यम से निकली स्लरी के रूप में प्रयोग किया जाए तो फसल अवशेषों से वर्मीकम्पोस्ट खाद काफी जल्दी बनता है तथा साथ में घरेलू उपयोग हेतु गैस भी मिलती है ताकि गोबर का इंधन के रूप में इस्तेमाल न हो। 2% स्लरी के प्रयोग से भी फसल अवशेष द्वारा अच्छी वर्मीकम्पोस्ट तैयार हो सकती है। इस प्रकार अधिकाधिक फसल अवशेषों को कम्पोस्ट में परिवर्तित किया जा सकता है। एक एकड़ से प्राप्त फसल अवशेष (जैसे धान से 25 क्विं./एकड़) को अन्य अवशेषों व गोबर के साथ मिलाकर 2 टन वर्मीकम्पोस्ट तैयार की जा सकती है जिसे अगर एक एकड़ में ही प्रयोग कर लें तो भी हम आसानी से टिकाऊ कृषि कर सकते हैं।

समन्वित कृषि प्रणाली का एक स्वरूप आगे मॉडल के रूप में दिया गया है (रेखाचित्र 1)। पांच एकड़ जोत का किसान जो 2 गाय/भैंस रखता है, के पास लगभग 15 टन फार्म अवशेषों की उपलब्धता प्रति वर्ष का आकलन है। इस अवशेष से तैयार 10 टन खाद को 2 टन प्रति एकड़ की दर से उपयोग करके वह कार्बनिक खेती कर सकता है। वर्मीकम्पोस्ट इकाई का मॉडल प्रारूप व आर्थिक विश्लेषण पूर्व अध्याय में दिया गया है।

रेखाचित्र 1. समन्वित कार्बनिक कृषि प्रणाली मॉडल

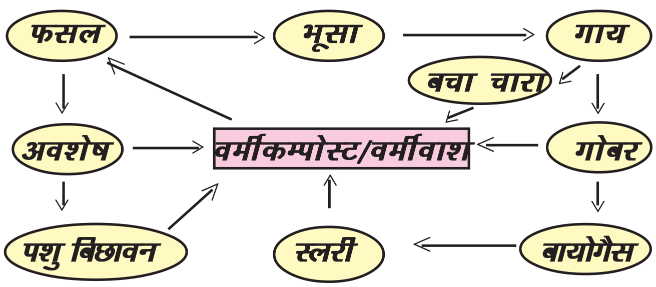

संदर्भ–सूची

1. चौधरी, एम.के. एवं पाल, डी. (1994). राइस–व्हीट सिस्टम इन नार्थ–वेस्ट इंडिया : इश्सूज फॉर कंसीड्रेशन. इन– प्रोसीडिंग्स ऑफ सिम्पोजियम ऑन सस्टेनेबिलिटी ऑफ राइस–व्हीट सिस्टम इन इंडिया, 7–8 मई, 1994, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, करनाल, पृ0 147–157.
2. दहामा, ए.के. (2002). आर्गेनिक फार्मिंग फॉर सस्टेनेबल एग्रीकल्चर. एग्रोबायोस (इंडिया), जोधपुर.
3. गिल, एच.एस. एवं मीलू, ओ.पी. (1982). फर्टिलाइजर रिसर्च, 3 : 303–314.
4. गुप्ता, आर.के.; होब्स, पी.आर.; लड्ढ़ा, जे.के. एवं प्रभाकर, एस.वी.आर.के. (2002). रिसोर्स कंजर्विंग टैक्नोलोजिज : ट्रांस्फोर्मिंग द राइस–व्हीट सिस्टम्स ऑफ द इंडो–गंगैटिक प्लेंस. अपारी पब्लिकेशन, 2002/1, अपारी, एफ.ए.ओ., बैंकाक.
5. हैरिंग्टन, एल.डब्ल्यू.; फुजुसाका, एस.; मोरिस, एम. एल.; होब्स, पी.आर.; शर्मा, एच.सी.; सिंह, आर. पी.; चौधरी, एम.के. एवं धीमान, एस.डी. (1993). व्हीट एण्ड राइस इन करनाल एण्ड कुरुक्षेत्र डिस्ट्रिक्ट्स, हरियाणा, इंडिया : फार्मर्स प्रैक्टिसिज, प्रोब्लम्स एण्ड एन एजैंडा फॉर एक्शन. एच.ए.यू., सिम्मिट, आई. आर.आर.आई.
6. इस्माइल, एस.ए. (1997). वर्मीकॉलोजी – द बायोलॉजी आफ अर्थवर्म्स. ओरियन्ट लोंगमैन, चेन्नई.
7. लड्ढ़ा, जे.के.; फिशर, के.एस.; हुसैन, एम.; होब्स, पी.आर. एवं हार्डी, बी. (2000). इम्प्रूइंग द प्रोडक्टिविटी एण्ड सस्टेनेबिलिटी ऑफ राइस–व्हीट सिस्टम्स ऑफ द इंडो–गंगैटिक प्लेंस : ए सिंथसिस ऑफ एन.ए. आर.एस. – आई.आर.आर.आई. पार्टनरशिप रिसर्च. आई.आर.आर.आई. डिस्कशन पेपर सीरिज नं0 40, आई.आर.आर.आई., लास बानोस, फिलीपींस.
8. मलिक, आर.के.; गिल, जी. एवं होब्स, पी.आर. (1998). हर्बिसाइड रैजिस्टैंस – ए मेजर इश्यू फॉर सस्टेनिंग व्हीट प्रोडक्टिविटी इन राइस–व्हीट क्रोपिंग सिस्टम इन इंडो–गंगैटिक प्लेंस. राइस–व्हीट कंसोर्टियम पेपर सीरिज 3, राइस–व्हीट कंसोर्टिसम फॉर इंडो–गंगैटिक प्लेंस, नई दिल्ली.
9. परोदा, आर.एस. (2003). सस्टेनिंग अवर फूड सिक्योरिटी. कोणार्क पब्लिशर्स, दिल्ली.
10. पालनियप्पन, एस.पी. एवं अन्नादुरई, के. (1999). ऑर्गेनिक फार्मिंग–थ्योरी एंड प्रैक्टिस. सांइटिफिक पब्लिशर्स, जोधपुर.
11. रूपेला, ओ.पी. (2002). शुद्धवातावरण, अधिक उपज व उपजाऊ भूमि के लिए धान की पराली से खाद बनाने का तरीका. पैम्फलेट, इकरीसेट, हैदराबाद.
12. रबी फसलों की समग्र सिफारिशें (2004). चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार.
13. श्योराण पी. (2003). नाइट्रोजन मैनेजमेंट एंड इट्स इम्पैक्ट, एसैस्मेंट एट फार्मर्स फील्ड इन राइस इन राइस – व्हीट क्रोपिंग सिस्टम, पी.एच.डी. थीसिस, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार.
14. सिंह, के.पी. (2002). स्कोप ऑफ ऑर्गेनिक फार्मिंग एण्ड वर्मीटैक्नोलोजी इन इंडिया. नेशनल सेमीनार ऑन ऑर्गेनिक फार्मिंग, 28–29 मई, 2002, भोपाल.
15. टंडन, एच.एल.एस. (सं.) (1994). फर्टिलाइजर्स, ऑर्गेनिक मैन्योर्स, रिसाइक्लेबल वेस्ट्स एण्ड बायोफर्टिलाइजर्स. एफ.डी.सी.ओ., नई दिल्ली.